नई दिल्ली
रविवार, 16 जून, 2024, मूल्य-15.00
राष्ट्रीय
वर्ष-6 अंक-34, पृष्ठ- 8
RNI: DELHIN / 2018 / 76679
Postal Reg. No. DL(C)-05/1425/2022-24
License To Post Without Pre Payment No. U(C)-164/2022-24
Magazine Post Reg. No. DL(DS)-31/MP/22-24

संडे नवजीवन

Freedom is in Peril, Defend it with all your might Jawaharlal Nehru

जो सहयोगियों का मन भाए, सिर्फ वही बातें कर पाएंगे पतली रस्सी पर चल रहे मोदी 2

कांवड़ के नाम पर लाखों पेड़ काटेंगे तो सोचिए, क्या हाल हो जाएगा 5

किस्सों वाली कला 8

www.navjivanindia.com | @navjivanindia | www.nationalheraldindia.com | www.qaumiawaz.com

अस्तित्व का खौफ बांधे रख सकता है 'इंडिया' को

गठबंधन के सामने बड़ी चुनौती है। उसकी भलाई इसी में है कि इसके दल हमेशा याद रखें कि आखिर वे एक साथ क्यों आए

कुमार केतकर

साथ बने रहेंगे इंडिया गठबंधन में शामिल दल जानते हैं कि एक साथ बने रहना उनके अस्तित्व का सवाल है। इनमें से किसी भी पार्टी ने इससे पहले फासीवाद का सामना नहीं किया है। भारतीय इतिहास में इस खतरे की कोई मिसाल नहीं है। यह 'खौफ' ऐसा गोंद है जो आने वाले दिनों में इन्हें बांधे रखेगा। दोनों फोटोः गेटी इमेजेज

जब हम 'विपक्ष' कहते हैं तो उससे हमारा आशय क्या होता है, इसे बिना किसी संदेह के समझना जरूरी है। इसके खांचे में आने वालों में क्या समानता होती है? 'विपक्ष' को परिभाषित करने वाली पार्टियों के बीच आम सहमति कहां है?

'विपक्ष' शब्द का बहुत ज्यादा इस्तेमाल किया जाता है और पिछले कुछ सालों के दौरान तो इसका दुरुपयोग ही किया गया है। यह इतना अस्पष्ट है कि यह न तो विषय-वस्तु बताता है और न ही शैली। अक्सर, कथित विपक्षी दल अचानक सत्तारूढ़ दल बन जाते हैं- चुनाव के जरिये नहीं बल्कि दलबदल के जरिये- और यह अब आम बात हो गई है। कुछ विद्वानों ने दलबदल का लोकतांत्रिक विकल्प कहकर बचाव भी किया है।

कुछ साल पहले नीतीश कुमार विपक्ष के स्टार थे। वह विपक्षी ब्लॉक के संयोजक बनना चाहते थे। वह वामपंथी झुकाव वाले एनजीओ और उदार बुद्धिजीवियों के चहेते थे। 2017 में मैंने चंपारण सत्याग्रह की शताब्दी मनाने के लिए पटना में नीतीश कुमार द्वारा आयोजित एक सम्मेलन में भाग लिया था। इसमें कई पत्रकार, कवि, इतिहासकार, शिक्षाविद और स्वतंत्रता आंदोलन के दिग्गज शामिल हुए। नीतीश ने पूरी वाक्पटुता के साथ बात की और नरेन्द्र मोदी शासन के फासीवाद से लड़ने के लिए 'आज का सत्याग्रह' के लिए तैयार रहने की अपील की। पुरुषोत्तम अग्रवाल और शम्सुल इस्लाम जैसे बुद्धिजीवियों ने उनकी बातों को दोहराया। जाने-माने पत्रकार हरिवंश जो अब राज्यसभा के उपसभापति हैं, ने भी नीतीश की बात का समर्थन किया। पाठकों को याद होगा कि इतिहासकार और राजनीतिक टिप्पणीकार रामचंद्र गुहा ने विपक्ष के प्रधानमंत्री पद के चेहरे के रूप में नीतीश कुमार की उम्मीदवारी की पुरजोर वकालत की थी। गांधी परिवार के कट्टर आलोचक गुहा ने तर्क दिया था कि भारत में राजनीति को नई दिशा देने के लिए 'वंशवाद की जंजीर' को तोड़ना होगा। उन्होंने कहा था कि नीतीश इसके लिए 'सही व्यक्ति' हैं। बाद में उन्होंने माना कि यह एक गलती थी और गुहा के प्रति निष्पक्षता बरतते हुए मैं कहना चाहूंगा कि तब नीतीश ने 'पलटू बाबू' के रूप में अपनी पहचान नहीं बनाई थी।

हिन्दुत्व के जोशीले पैरोकार राम जेठमलानी एक समय भाजपा के उपाध्यक्ष होते थे और वाजपेयी युग में वह मंत्री भी रह चुके थे। उन्होंने 94 वर्ष की आयु में स्वीकार किया कि प्रधानमंत्री पद के लिए नरेन्द्र मोदी का नाम आगे बढ़ाकर उन्होंने बहुत बड़ी भूल की थी। जेठमलानी ने बड़ी शर्मिंदगी के साथ याद किया कि उन्होंने मोदी को शीर्ष पद के लिए सबसे योग्य उम्मीदवार के रूप में देखा था! उन्होंने सोचा कि जब 'दूसरी ओर' जाने का समय आएगा तो चित्रगुप्त (जो हिन्दू पौराणिक कथाओं के अनुसार हमारे सांसारिक कर्मों का लेखा-जोखा रखते हैं) उनके पाप का हिसाब किस खाने में रखेंगे। बाद के दिनों में वह जिस तरह मोदी की बुराई करते रहे, यह सबने देखा। आप इस कानूनी दिग्गज को कहां रखेंगे? सत्तारूढ़ गुट के साथ या विपक्ष के साथ?

यहां तक कि एक समर्पित धर्मनिरपेक्ष समाजवादी जयप्रकाश नारायण ने भी 1974 में 'विपक्षी' दलों से आग्रह किया था कि वे इंदिरा गांधी के 'निरंकुश' शासन को चुनौती देने के लिए आरएसएस और जनसंघ को साथ लें। जेपी से भी पहले राम मनोहर लोहिया और उनके समाजवादी अनुयायियों ने एक बहुदलीय कांग्रेस विरोधी मोर्चा शुरू किया था जिसमें जनसंघ भी शामिल था। लोहिया कुनबा बिखर गया। मुलायम सिंह यादव से लेकर लालू प्रसाद, नीतीश कुमार से लेकर जॉर्ज फर्नांडिस, शरद यादव से लेकर देवेगौड़ा, कर्पूरी ठाकुर से लेकर एसएम जोशी, मधु लिमये से लेकर राज नारायण तक... 'कांग्रेस विरोध' नाम की इस अजीब, अराजक प्रवृत्ति ने कई अवतार देखे हैं। कई एनजीओ आज भी लोहिया के राजनीतिक दर्शन के प्रति वफादार हैं। कुछ खुद को सत्ता प्रतिष्ठान के साथ जोड़ते हैं और कुछ विपक्ष के साथ और कभी-कभी वे अपना रुख बदल लेते हैं जैसे कि म्यूजिकल चेयर खेल रहे हों।

आज इंडिया ब्लॉक की ज्यादातर पार्टियां अतीत में भाजपा के साथ गठजोड़ कर चुकी हैं या उसके नेतृत्व वाली सरकारों में शामिल रही हैं। ममता की तृणमूल कांग्रेस से लेकर करुणानिधि की डीएमके तक, शिवसेना से लेकर समाजवादी पार्टी, नेशनल कॉन्फ्रेंस से लेकर पीडीपी और जनता दल तक। लंबे समय तक कांग्रेस में रहे और पूर्व प्रधानमंत्री वी.पी. सिंह ने एक बार कहा था कि वह लोहिया और जेपी के अनुयायी हैं जिससे यह पता चलता है कि वह संघ परिवार से समर्थन लेने के खिलाफ नहीं थे। थोड़े समय के लिए रही उनकी सरकार को भाजपा और वामपंथियों- दोनों ने समर्थन दिया था। वामपंथी दलों ने कभी भी सीधे तौर पर भाजपा का समर्थन नहीं किया लेकिन 1980 के दशक के अंत में और बाद में भारत-अमेरिका परमाणु समझौते के मुद्दे पर संसद में और बाहर 'फ्लोर मैनेजमेंट' के नाम पर वे भी एक ही पाले में रहे।

> बेहतर हो कि अगली बार जब भी किसी विपक्षी दल पर भाजपा, खासकर मोदी-शाह 'अवतार' से जुड़ने के डोरे डाले जाएं, तो उन्हें याद रहे कि भाजपा अतीत में कैसे अपने सहयोगियों को 'चबा' जाती रही है। आज विपक्ष के लिए चुनौती यह है कि उनके पास समान राजनीतिक लक्ष्य तो है लेकिन वे एक वैचारिक मंच साझा नहीं करते

विपक्ष शब्द का इस्तेमाल ज्यादातर कांग्रेस विरोधी मोर्चों के लिए किया जाता है और इसके अपने कारण हैं। 1971 के महागठबंधन में जनसंघ, संयुक्त समाजवादी पार्टी, प्रजा समाजवादी पार्टी, स्वतंत्र पार्टी और इंदिरा विरोधी कांग्रेस (ओ) शामिल थीं। जनसंघ/भाजपा या कम्युनिस्टों को छोड़कर इनमें से ज़्यादातर पार्टियां कांग्रेस की ही शाखाएं या उससे अलग हुए समूह थीं। स्वतंत्र पार्टी के संस्थापक राजगोपालाचारी महात्मा गांधी के नेतृत्व में कांग्रेस के एक प्रमुख नेता रहे थे। लोहिया और जेपी नेहरू के कट्टर सहयोगी थे। फॉरवर्ड ब्लॉक की स्थापना करने वाले सुभाष चंद्र बोस हों या आचार्य कृपलानी, चंद्रशेखर, चरण सिंह और राष्ट्रवादी कांग्रेस पार्टी के संस्थापक शरद पवार- ये सभी पहले कांग्रेस में थे। तृणमूल कांग्रेस भी कांग्रेस से ही निकली। तो फिर भला विपक्ष क्या है?

यकीन करें, मौजूदा विपक्ष, यानी 'इंडिया' ब्लॉक को तोड़ने की योजना पहले से ही चल रही है। कुछ स्वयंभू चाणक्य सार्वजनिक रूप से कहने लगे हैं कि साल के अंत तक लोकसभा में भाजपा की संख्या 280 को पार कर जाएगी और तब वे चंद्रबाबू नायडू की टीडीपी या नीतीश कुमार की जेडी(यू) पर निर्भर नहीं रहेंगे। इस रणनीति का आधार वही पुराना 'कांग्रेस-विरोध' है, हालांकि इसमें कुछ नीरस बदलाव हैं और वह अपनी सत्ता-लोलुप अवसरवादिता को सही ठहराने के लिए अपने पसंदीदा 'पंचिंग बैग' नेहरू-गांधी परिवार को निशाना बनाती है। यह याद रखना चाहिए कि अपने अस्तित्व को सही ठहराने के लिए कांग्रेस-विरोध का सहारा लेने वाले किसी भी संगठन का अस्तित्व नहीं बचा। जनता पार्टी बिखर गई, वी.पी. सिंह का प्रयोग विफल हो गया। चंद्रशेखर की सरकार नहीं चली, न ही देवेगौड़ा की और न ही आई.के. गुजराल की। लोहिया-जेपी सिद्धांत की सबसे बड़ी लाभार्थी भाजपा रही है। बेहतर हो कि अगली बार जब भी किसी विपक्षी दल पर भाजपा, खासकर मोदी-शाह अवतार से जुड़ने के लिए डोरे डाले जाएं, तो उन्हें याद रहे कि भाजपा अतीत में कैसे अपने सहयोगियों को 'चबा' जाती रही है। आज विपक्ष के लिए चुनौती यह है कि उनके पास समान राजनीतिक लक्ष्य तो है लेकिन वे एक वैचारिक मंच साझा नहीं करते। उनके पास कोई साझा न्यूनतम कार्यक्रम या साझा प्रतीक नहीं है। इंडिया ब्लॉक ऐसा गठबंधन है जिसमें ये सामान्य विशेषताएं नहीं हैं। दूसरी ओर, इंडिया ब्लॉक के इस चरित्र के पक्ष में कुछ चीजें हो सकती हैंः घटक दलों ने अपनी-अपनी पहचान, प्रतीक और इन नेताओं को बनाए रखा है जिनका अहंकार जेपी की जनता पार्टी जैसे गठबंधन के रास्ते में आ सकता है। इन सभी सामान्य विशेषताओं के बावजूद, जनता पार्टी बिखर गई और कई जनता दल और कुछ समाजवादी पार्टियां बनीं। उनमें से कुछ अब मोदी के साथ हैं, कुछ इंडिया ब्लॉक के साथ। इंडिया ब्लॉक में शामिल होने वाले लोग इस खौफ से एकजुट हैं कि मोदी-शाह की भाजपा पहले उन्हें निगलना शुरू करेगी और फिर उन्हें खत्म कर देगी। उन्होंने देखा है कि कैसे अन्नाद्रमुक, शिवसेना, अकाली दल और एनसीपी जैसी पार्टियों पर हमला किया गया, उन्हें तोड़ा गया या ब्लैकमेल किया गया।

इन दलों के लिए यह उनके अस्तित्व का सवाल है। यह भी सच है कि इनमें से किसी भी पार्टी ने इससे पहले फासीवाद का सामना नहीं किया है। भारतीय इतिहास में इस खतरे की कोई मिसाल नहीं है। इससे पहले कभी भी कथित स्वायत्त संस्थाओं का इस तरह राजनीतिक दलों और उनके नेताओं, असंतुष्टों और आलोचकों को आतंकित करने और ब्लैकमेल करने के लिए इस्तेमाल नहीं किया गया था, ताकि वे भाजपा के सामने हथियार डाल दें। यह 'खौफ' ऐसा गोंद है जो आने वाले दिनों में 'इंडिया' ब्लॉक को बांध सकता है। आज की भाजपा की तानाशाही, खुलेआम बहुसंख्यकवाद के खिलाफ खड़े होकर, वे शायद एकजुट रह सकें। आने वाले 6-12 माह में पता चल जाएगा कि उन्होंने जरूरी सबक सीखे भी हैं या नहीं। ■

गोपनीयता का नकाब उतर गया है

उम्मीद करनी चाहिए कि आने वाले दिनों में मोदी सरकार में वास्तविक खबरें सामने आएंगी

आकार पटेल

अब खुली हवा पहले की नरेन्द्र मोदी सरकारों में सबकुछ गोपनीय था। अब ऐसा नहीं होगा। सहयोगी दलों की मौजूदगी के चलते अब कैबिनेट की जिम्मेदारी और अधिकार सिर्फ एक ही व्यक्ति के पास नहीं रहेंगे।

शपथ ग्रहण से पहले प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने संसद के केन्द्रीय कक्ष में एनडीए सहयोगियों को संबोधित किया। उनका संदेश था कि वह अगले दस साल तक प्रधानमंत्री रहेंगे (हालांकि उन्होंने यह नहीं कहा कि यह उन्हें कैसे पता है)। लेकिन हां, उन्होंने यह बात सरसरी तौर पर कही थी। असली संदेश तो सहयोगी दलों के लिए यह था कि वे खबरों और सूचनाओं पर ध्यान न दें।

संदेश था कि शपथ ग्रहण के साथ ही उनकी सरकार के बारे में खबरें तो आनी शुरू ही हो जाएंगी लेकिन सहयोगी दल इनकी अनदेखी करें और बिना पुष्टि किसी बात पर भरोसा न करें। आखिर, उन्हें यह सब कहने की जरूरत क्यों थी? निश्चित रूप से इसलिए क्योंकि अब सरकार के बारे में उस तरह लिखा जाएगा जैसा कि पिछले एक दशक में नहीं लिखा गया। हम अभी एक पूर्ण गोपनीयता वाले काल से बाहर आए हैं।

पूर्व की बात करें, तो मोदी की कैबिनेट के मंत्रियों को नोटबंदी की हवा तक नहीं थी। हमें इसलिए पता है क्योंकि बाद में सामने आया कि नोटबंदी के ऐलान से चंद घंटे पहले ही कैबिनेट की बैठक बुलाई गई थी जिसमें नोटबंदी को मंजूरी दिलाई गई थी। लेकिन इस बैठक से पहले सभी मंत्रियों को उनके मोबाइल फोन बाहर ही छोड़ने की हिदायत दी गई थी। ऐसा इसलिए किया गया था कि नोटबंदी की खबर बाहर न चली जाए। चूंकि मंत्रियों को भी नहीं पता था, इसलिए उनके मंत्रालयों को भी कोई खबर नहीं थी। ऐसी ही स्थिति 2020 में लागू किए गए देशव्यापी लॉकडाउन को लेकर भी थी जिसके बाद सरकार में शामिल लोग तक सकते में आ गए थे।

अब ऐसा कुछ नहीं होगा। सहयोगी दलों की मौजूदगी के चलते अब कैबिनेट की जिम्मेदारी और अधिकार सिर्फ एक ही व्यक्ति के पास नहीं रहेंगे। यह एक अच्छी बात है।

लोकतांत्रिक व्यवस्थाओं में मीडिया जो कयास लगाता है, उसका एक कारण होता है। इससे पता चलता है कि प्रेस स्वतंत्र है जो सत्ता में बैठे लोगों के बारे में बिना किसी भय के कयास लगा सकता है। लेकिन यह सिर्फ एक पहलू है। दूसरा यह कि वे बातें जो बंद दरवाजों के पीछे होती है और जिन्हें नहीं कहा जा सकता, उन्हें भी अंदर बैठे लोग फैलाते हैं ताकि उनको इसका कुछ फायदा मिल सके। लोकतंत्र में यह सब सामान्य माना जाता है। सिर्फ तानाशाही शासन में ही ऐसा होता है जहां न किसी को कोई जानकारी होती है और न ही जो कुछ चल रहा है, उसके बारे में कोई कयास लगाया जा सकता है। तानाशाही में ही लोगों पर निगरानी रखने का खौफ और बोलने पर दंडित किए जाने का खतरा सिर पर मंडराता रहता है।

ऐसे में, हमें अब अपेक्षा करनी चाहिए कि आखिर मीडिया के एक धड़े में तो ऐसा बदलाव आएगा और प्रधानमंत्री ने भी इसे समझ लिया है। लेकिन जो निश्चित नहीं है, वह यह कि आखिर उन्हें क्यों लगता है कि उनके सहयोगी उनकी बात नहीं सुनेंगे क्योंकि निस्संदेह वे वही सुनेंगे जिसकी उन्हें फिक्र है। नरसिम्हा राव की सरकार गिरने के तुरंत बाद शुरू हुए गठबंधन की सरकारों के मुकाबले मोदी को कुछ लाभ है। वह लाभ यह है कि उनके पास अपनी पार्टी के 240 सांसद हैं। एनडीए नेता के तौर पर उनसे पहले तीन बार प्रधानमंत्री रहे अटल बिहारी वाजपेयी के पास अपने अंतिम कार्यकाल में पार्टी के केवल 180 सांसद ही थे। इसका अर्थ है कि सहयोगियों के प्रति अधिक असुरक्षा की भावना, यहां तक कि गठबंधन स्वयं ही खबरों में आने लगा है।

फरवरी, 1999 में एक अद्भुत रिपोर्ट सामने आई थी जिसमें कहा गया था कि वाजपेयी ने तत्कालीन रक्षा मंत्री जॉर्ज फर्नांडीज को एआईएडीएमके नेता और एनडीए की सहयोगी जयललिता को मनाने भेजा था। फर्नांडीज चेन्नई गए थे और जयललिता के पोज गार्डन स्थित घर पर भाजपा नेता प्रमोद महाजन के साथ अपाइंटमेंट लेकर पहुंचे थे। फिर भी जयललिता ने उनसे मुलाकात नहीं की। इसके बजाय जयललिता ने इंटरकॉम पर फर्नांडीज को एक तरह की डांट लगाई। इसके बाद दोनों नेता बैरंग वापस आ गए थे। ऐसी ही एक खबर नवंबर, 2001 में सामने आई थी जिसका शीर्षक था, 'कैबिनेट में जगह न मिलने से ममता कुपित'। इसमें कहा गया था कि एनडीए में शामिल होने के बावजूद तृणमूल कांग्रेस ने कैबिनेट बैठक का बहिष्कार किया। उस समय के भाजपा अध्यक्ष जना कृष्णामूर्ति ने कहा था, "आखिर तुरंत कोई मंत्री बनने की उम्मीद कैसे लगा सकता है? हमारे अपने सांसद भी हैं जो मंत्री बनने की ख्वाहिश रखते हैं और वे काफी समय से इंतजार कर रहे हैं।" उनका इशारा दिल्ली के दो सांसदों- मदन लाल खुराना और साहिब सिंह वर्मा की तरफ था जो मंत्री बनने का इंतजार कर रहे थे और इसी वजह से उनकी नाराजगी भी सामने आ रही थी। गठबंधन ऐसे ही होते हैं और हमेशा से उनका आचार-व्यवहार ऐसा ही होता है। पिछले दशक के दौरान हमने भारत की राजनीति में लेन-देन की परंपरा से भटकाव देखा है। वाजपेयी एक व्यावहारिक और पुराने तरीके के राजनेता थे जो असुविधा और चिड़चिड़ाहट और कभी-कभी अपमान तक को स्वीकार कर लेते थे। हालांकि उनके पास अपनी पार्टी के सांसदों की कम संख्या थी लेकिन मोदी के मुकाबले उनके पास यही सबसे बड़ा लाभ भी था जबकि मोदी स्वभाव से सत्तावादी हैं (मैं उन्हें व्यक्तिगत रूप से जानता हूं और इस बात की पुष्टि कर सकता हूं) लेकिन अब उन्हें समझौता करना सीखना होगा।

उम्मीद करें कि मोदी को उन स्थितियों से निरंतर दो-चार नहीं होना पड़ेगा जैसी परिस्थितियों का वाजपेयी को सामना करना पड़ा था क्योंकि उनके पास अधिक सीटों का आधार है। फिर भी ऐसे मौके आ सकते हैं जिन्हें 2014 से 2024 के बीच देश ने देखा है। वे मौके होंगे जब अपने मंत्रिमंडल पर अपनी मर्जी का कुछ थोपना चाहेंगे। हमें पूरी तरह उम्मीद है कि अगर ऐसा होगा, तो उसकी खबरें सामने आएंगी क्योंकि गठबंधन के सहयोगी या भाजपा के भीतर के ऐसे लोग जो खुद की बात सामने रखना चाहते रहे हैं या चाहेंगे, वे इन सबकी खबरों को सामने लाना चाहेंगे। ऐसे में लोगों से यह कह देना कि खबरों को अनदेखा कर देना, काम नहीं करने वाला है।

किसी गठबंधन में सहयोगी शब्द थोड़ा भ्रामक होता है क्योंकि यह किसी ऐसे व्यक्ति का भाव देता है जो हमेशा आपके लिए और आपके साथ है। यह गलत है। गठबंधन सहयोगी हमेशा अपने लिए और कभी-कभी आपके साथ होते हैं। एकदम पूर्ण साझेदारी में मतभेद के ऐसे क्षण नहीं आते हैं। लेकिन ऐसा केवल परियों की कहानियों और दिव्य प्राणियों के साथ ही होता है। हम नश्वर लोगों के लिए, दुनिया एक वास्तविक जगह है और हमें इसकी अप्रिय वास्तविकताओं का सामना करना होगा, उन्हें अनदेखा नहीं करना चाहिए क्योंकि वे निश्चित रूप से सामने आएंगी ही।

वे लोग जो खबरें लिखते हैं, खबरें बताते हैं या खबरों को देखते-सुनते-पढ़ते हैं, उनके लिए यह सब काफी रोचक और रोमांचक और कभी-कभी अगले पांच साल तक मनोरंजक भी होगा। ■

जो सहयोगियों को हो पसंद, वही बात कर पाएंगे मोदी?

गुजरात में मुख्यमंत्री रहने के समय से ही नरेन्द्र मोदी को पूर्ण बहुमत वाली सरकार चलाने की आदत है। देखने वाली बात होगी कि वह अपनी आदत छोड़ेंगे या...

शरद गुप्ता

मुख-मुद्रा प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी और भाजपा नेता अब इस तरह सिर्फ हाथ जोड़े इसलिए नजर आ रहे हैं क्योंकि उन्हें पता है कि इसके बिना सत्ता बनी नहीं रहनी है।

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी का लगातार तीसरे कार्यकाल के लिए शपथ लेना आगे की राह की तुलना में काफी आसान रहा। गुजरात के मुख्यमंत्री (2002-2014) के दौरान उन्होंने निरंकुश शैली अपनाई थी। जब उनकी पार्टी के पास केन्द्र में पूर्ण बहुमत था, तब भी उन्होंने यही रवैया अपना रखा था। 2024 में उनकी सरकार का अस्तित्व सहयोगियों पर निर्भर है और इसलिए यह आसान नहीं होने वाला है। सबसे बड़ा सवाल यही है कि क्या मोदी नरम पड़ेंगे? क्या तेंदुआ अपने धब्बे बदल सकता है?

16 सांसदों वाली तेलुगु देशम पार्टी (टीडीपी) और 12 सांसदों वाली जनता दल(यू) मोदी 3.0 को सहारा देने वाले दो स्तंभ हैं। पांच सांसदों वाली चिराग पासवान की लोक जन शक्ति पार्टी के अलावा दो-दो सांसदों वाली एचडी कुमारस्वामी की जनता दल (सेक्युलर) और जयंत चौधरी की राष्ट्रीय लोक दल एनडीए की अन्य पार्टियां हैं।

71 सदस्यीय मोदी मंत्रिमंडल में टीडीपी और जद(यू) को दो-दो पद दिए गए हैं जबकि अन्य दलों को एक-एक। मोदी ने किसी तरह दोनों प्रमुख सहयोगियों को चार बड़े मंत्रालयों- गृह, वित्त, विदेश और रक्षा- या लोकसभा अध्यक्ष के पद की मांग न करने के लिए राजी कर लिया है। इसके बजाय, वे पर्याप्त धन (आंध्र प्रदेश की नई राजधानी अमरावती के लिए) और दोनों राज्यों के लिए विशेष पिछड़ा क्षेत्र का दर्जा दिए जाने के आश्वासन से संतुष्ट दिखते हैं।

भाजपा द्वारा मंत्रिमंडल गठन के लिए तैयार किया गया फॉर्मूला हर चार सांसदों पर एक मंत्री का था। इससे टीडीपी को चार और जद(यू) को तीन पद मिल गए। मंत्रिमंडल के सदस्यों की संख्या सदन की कुल क्षमता का अधिकतम 15 प्रतिशत हो सकती है। इसका मतलब है कि मोदी मंत्रिमंडल में अब भी 10 और सदस्यों को शामिल करने की गुंजाइश है। भाजपा सूत्रों के अनुसार, टीडीपी और जद(यू)- दोनों को आश्वासन दिया गया है कि उनके शेष सदस्यों को पहले मंत्रिमंडल फेरबदल में शामिल किया जाएगा।

क्या इसका मतलब यह है कि उन्होंने सौदेबाजी की अपनी शक्ति खो दी है? क्या मोदी प्रधानमंत्री के रूप में अपने पिछले दो कार्यकालों की तरह ही 'निष्ठुर' होंगे? अब दोनों दलों के सामने क्या विकल्प हैं?

टीडीपी सुप्रीमो एन. चंद्रबाबू नायडू और जद(यू) प्रमुख नीतीश कुमार- दोनों ही होशियार राजनीतिज्ञ हैं। मांगों को जोर-शोर से उठाने के बजाय, वे केवल ऐसे मुद्दे उठा सकते हैं जो भाजपा को पसंद नहीं हैं। दोनों नेता निश्चित रूप से देश भर में जाति आधारित जनगणना की मांग करेंगे। हालांकि भाजपा बिहार सरकार में शामिल थी जिसने राज्य में ऐसी ही एक जनगणना का आदेश दिया था लेकिन वह राष्ट्रीय स्तर पर इस परियोजना से बिल्कुल भी सहज नहीं है क्योंकि इससे कोटा और उप-कोटा आरक्षण की तमाम मांगें उठ सकती हैं। महिला आरक्षण अधिनियम जनगणना के आधार पर महिलाओं के लिए सीटों का सीमांकन करेगा, और इसलिए इसमें देरी होने की संभावना है जब तक कि सरकार नरम नहीं पड़ती और 2025 में मध्यावधि जनगणना नहीं कराती। अगली दशकीय जनगणना 2031 में होनी है।

एक और विवादास्पद मुद्दा एम.एस. स्वामीनाथन समिति की रिपोर्ट के अनुसार सभी प्रमुख फसलों के लिए न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी) को वैध बनाने की मांग हो सकती है। मोदी सरकार ने अब तक इस मांग को स्वीकार नहीं किया है जबकि किसान नेता इसे बार-बार उठाते रहे हैं। लेकिन अगर सरकार के दो प्रमुख घटकों द्वारा मांग उठाई जाती है या उसका समर्थन किया जाता है, तो सरकार के लिए दुविधा की स्थिति हो जाएगी।

जद(यू) के महासचिव के.सी. त्यागी पहले ही मांग कर चुके हैं कि अग्निवीर योजना (भारतीय सेना के लिए सैनिकों की चार साल की अनुबंध-आधारित भर्ती) को खत्म किया जाए या संशोधित किया जाए। उन्होंने यह भी दावा किया कि इंडिया ब्लॉक ने नीतीश कुमार को प्रधानमंत्री पद देने की पेशकश की है। हालांकि कांग्रेस ने यह साफ कर दिया है कि ऐसा कोई प्रस्ताव नहीं दिया गया है लेकिन त्यागी का बयान आने वाले समय का संकेत है। यह मोदी-शाह की जोड़ी के लिए संकेत है कि अगर नीतीश को पर्याप्त रूप से समायोजित नहीं किया गया, तो वे पीछे हट जाएंगे। क्या मोदी 'राजनीतिक ब्लैकमेल' के आगे झुक जाएंगे? या वे स्वघोषित अभेद्यता पर अड़े रहेंगेः 'मोदी झुकेगा नहीं, भले ही टूट जाए'? पिछले 25 सालों से मोदी को देखने वाले लोग जानते हैं वह स्थिति देखकर रंग बदलने में माहिर हैं। 'मोदी की गारंटी' जैसे वादे पहले ही उनके शब्दकोश से गायब हो चुके हैं। चुनाव के बाद अपने भाषणों में- चाहे वह भाजपा मुख्यालय हो, राष्ट्रपति भवन हो या संसद के सेंट्रल हॉल में एनडीए सांसदों की बैठक हो, मोदी ने एक बार भी थर्ड पर्सन में खुद का जिक्र नहीं किया। वह बड़ी सावधानी से केवल 'एनडीए सरकार' की बात कर रहे हैं।

दिलचस्प बात यह है कि पिछले एक दशक के दौरान एनडीए खत्म हो चुका है। इसका कोई संयोजक नहीं है, कोई अध्यक्ष नहीं है, कोई सचिव नहीं है, कोई सचिवालय नहीं है और कोई कार्यालय भी नहीं है। एनडीए की बैठकें केवल चुनावों से पहले या बाद में बुलाई जाती हैं, और कभी-कभी किसी महत्वपूर्ण संसदीय सत्र के दौरान भाजपा अध्यक्ष के कार्यालय से निमंत्रण भेजे जाते हैं। इस प्रकार, यह भी देखा जाना बाकी है कि एनडीए को पुनर्जीवित करने को लेकर मोदी कितने गंभीर हैं। या वह केवल बोलने के लिए ऐसा बोल रहे हैं?

एनडीए सहयोगियों के साथ समझौता करने की तत्परता दिखाने के बावजूद मोदी अपने विरोधियों और यहां तक कि सहयोगियों पर भी पलटवार का कोई मौका नहीं छोड़ते। शिवसेना, जद(यू), एलजेएसपी, पीडीपी की महबूबा मुफ्ती समेत कई लोग इस बात की पुष्टि करेंगे कि वह पूरी तरह अवसरवादी हैं। उन्होंने उनकी पार्टी को तोड़ने से पहले पांच साल से अधिक समय तक शिवसेना अध्यक्ष उद्धव ठाकरे को 'सहा'। उन्होंने बिहार के मुख्यमंत्री और जद(यू) अध्यक्ष नीतीश कुमार को एनडीए के पाले में लाने के लिए एक बार नहीं, दो-दो बार प्रयास किए। इसी तरह, मोदी ने 2015 में भूमि अधिग्रहण विधेयक और तीन विवादास्पद कृषि विधेयकों (2019 में पारित) को वापस लेकर अपनी राजनीतिक चालाकी का परिचय दिया। गैरतलब है कि नए कृषि कानूनों के खिलाफ पूरे देश में साल भर से विरोध प्रदर्शन चल रहा था। उन्होंने सीएए और एनआरसी को भी लागू करने में जानबूझकर चार साल से ज्यादा देरी की, इसलिए नहीं कि वे ऐसा करने से डरते थे, बल्कि इसलिए कि वे एक उपयुक्त मौके की तलाश में थे। अब नायडू और नीतीश आरएसएस और उसके एजेंडे से दूरी बनाने की मांग कर सकते हैं। आरएसएस ने, शायद त्रिशंकु जनादेश की आशंका में, अगले साल होने वाले अपने भव्य शताब्दी समारोह को पहले ही टाल दिया है। 19 अप्रैल को पहले चरण के मतदान से एक दिन पहले जारी एक बयान में आरएसएस प्रमुख मोहन भागवत ने कहा कि उनका संगठन छाती ठोंकने में भरोसा नहीं करता और वह निःस्वार्थ और चुपचाप अपनी यात्रा जारी रखेगा। इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि 234 सांसदों के साथ अपनी जमीन वापस ले रहा विपक्ष मोदी सरकार के लिए हालात आसान बनने देगा, इसकी कोई संभावना नहीं है। लोकसभा में विपक्ष के संभावित नेता के रूप में राहुल गांधी हाथ चढ़ाने वाले अधीर रंजन चौधरी और शांत स्वभाव वाले मल्लिकार्जुन खड़गे से कहीं ज्यादा आक्रामक होंगे।

अगले 4-5 महीनों में महाराष्ट्र, झारखंड और हरियाणा में विधानसभा चुनाव होने हैं। ये चुनाव राज्यों में सरकारों के ही नहीं, मोदी सरकार के भाग्य का भी फैसला करेंगे। 2024 के लोकसभा चुनावों के नतीजों के आधार पर बात करें तो भाजपा (माफ कीजिए, एनडीए!) इनमें से किसी भी राज्य में नहीं जीतने जा रहा है। इससे मोदी की पकड़ और कमजोर हो जाएगी। इतिहास ने दिखाया है कि कमजोर तानाशाह जब हताश हो जाता है तो यही हताशा उसे पतन की ओर ले जाती है। यही सबसे बड़ा सवाल हैः क्या इतिहास खुद को दोहराएगा? ■

राज्य 360° लखनऊ उत्तर प्रदेश

भाजपा बलि का बकरा तलाश रही है

'मोदी मैजिक' के नशे में डूबी पराजय या मोदी के हारते-हारते जीतने के हालात। नजारा दिलचस्प है

सैय्यद जैग़म मुर्तज़ा

ख़ंजर भांजे जा रहे हैं। भाजपा यूपी में अपनी चुनावी हार के लिए बलि का बकरा तलाश रही है। पार्टी मानती है कि भाजपा समर्थक अपनी जीत को लेकर इतना ज्यादा आश्वस्त थे कि उन्होंने वास्तव में बाहर निकलकर मतदान करना या कराना जरूरी नहीं समझा। 'मोदी का जादू' तो जीत दिला ही देगा, यह सोचकर पार्टी कार्यकर्ताओं ने अतिरिक्त ऊर्जा भी नहीं लगाई। आरएसएस राज्य में सक्रिय था नहीं। जे.पी. नड्डा घोषणा कर ही चुके थे कि पार्टी को अब आरएसएस की बैसाखी की जरूरत नहीं रही। वगैरह वगैरह...।

फिलहाल, पार्टी की राज्य इकाई के भीतर अलग-अलग गुट एक-दूसरे पर उंगली उठाने में व्यस्त हैं। अफवाहों का बाजार वैसे भी कह रहा था कि चुनाव के बाद योगी आदित्यनाथ को किनारे लगा दिया जाएगा। योगी सूबे के लिए सर्वाधिक वांछित हिन्दुत्व पोस्टर बॉय के रूप में भले जाने जाते हों, मोदी उन्हें काबू में ही रखना चाहेंगे। राजपूतों की नाराजगी ने दोनों के बीच का तनाव और ज्यादा बढ़ाने का काम किया। राजनीतिक विश्लेषक याद दिलाने लगे हैं कि 2017 में नरेन्द्र मोदी योगी आदित्यनाथ को मुख्यमंत्री बनाने के पक्ष में नहीं थे। उनकी प्राथमिकता तो (जम्मू-कश्मीर के मौजूदा उपराज्यपाल) मनोज सिन्हा या फिर लखनऊ के पूर्व मेयर दिनेश शर्मा थे जिन्हें स्पष्ट रूप से आरएसएस ने वीटो कर दिया था। चुनाव बाद के अपने विश्लेषण में 'टेलीग्राफ', यहां तक कि स्वपन दासगुप्ता भी मानते दिख रहे हैं कि शायद एक 'अलग' दिखते योगी के कारण भाजपा को कई सीटों का नुकसान उठाना पड़ा है।

योगी समर्थक उनके बचाव में खासे आक्रामक हैं। वे सवाल उठाते हैं- क्या उम्मीदवारों का चयन योगीजी ने ही किया था? क्या राज्य में चुनाव प्रबंधन उन्हीं के हाथों में था? क्या भाजपा ने उन्हें असम से लेकर केरल तक पूरे देश में स्टार प्रचारक के रूप में इस्तेमाल नहीं किया? क्या वह देश भर में घूम-घूमकर अपने भाषण नहीं दे रहे थे, नरेन्द्र मोदी और 'राम लला' का जिक्र नहीं कर रहे थे? जब योगी ने गोरखपुर और उसके आसपास सारी सीटें जिताकर दिखा दिया तो फिर उन्हें दोष क्यों दिया जाए?

उपमुख्यमंत्री केशव मौर्य और ब्रजेश पाठक क्यों नहीं? क्या एक भी सीट ऐसी नहीं जिसे दिलाने में मौर्य असफल नहीं हुए हों, और पाठक को मिली-जुली जीत और हार ही मिलनी थी? ऐसे में यहां खलनायक कौन है?

कोई बताएगा, प्रधानमंत्री जीते या हारे?

प्रधानमंत्री के निर्वाचन क्षेत्र वाराणसी में तो केन्द्रीय गृहमंत्री अमित शाह ने आधी केन्द्रीय कैबिनेट के साथ डेरा जमा रखा था। गुजरात के राजनीतिक कार्यकर्ताओं के बड़े-बड़े जत्थे अपने तंबू गाड़े हुए थे। हैदराबाद की माधवी लता समेत हिन्दुत्व के लगभग सारे शुभंकरों (प्रतीक) ने प्रधानमंत्री के लिए जोर-शोर से प्रचार करने में कोई कसर नहीं छोड़ी। भाजपा के राष्ट्रीय अध्यक्ष जे.पी. नड्डा ने भी कुछ उठा नहीं रखा था। मोदी के अपने अत्यंत भरोसेमंद अफसर भी प्रशासन, चुनाव आयोग और उसके पर्यवेक्षकों के साथ समन्वय कायम करने के लिए शहर में मौजूद थे। लेकिन प्रधानमंत्री की इतनी मामूली अंतर वाली जीत के लिए कोई भी उनमें से किसी को दोषी नहीं ठहरा रहा है!

एक भाजपा नेता कहते हैं- "लखनऊ और वाराणसी में सबको पता था कि प्रधानमंत्री गिनती के दौरान पीछे चल रहे थे। यही वजह रही कि शाम चार बजे के बाद इसकी रफ्तार धीमी हो गई। देर रात उन्हें विजेता घोषित करने से पहले वोटों में हेरफेर की गई।" उनके तर्क का समर्थन भाजपा के एक 'कार्यकर्ता' ने किया जिनकी पहचान उज्ज्वल कुमार और उज्ज्वल मिश्रा के रूप में हुई जिसने सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म पर कहा, "उनको डेढ़ लाख वोट दिलाया गया।" तात्पर्य साफ है कि यह जीत उनके लिए 'मैनेज' की गई और इससे पहले वह वास्तव में हार चुके थे। यहां तक कि अमेठी में केन्द्रीय मंत्री स्मृति ईरानी पर किशोरी लाल शर्मा की जीत का अंतर भी वाराणसी में मोदी से ज्यादा था।

लखनऊ में एक पत्रकार कहते हैं- "वह जानते हैं कि वह हार गए; अधिकारी जानते हैं कि वह हार गए; और योगी तो न सिर्फ यह जानते हैं कि वह हारे बल्कि यह भी जानते हैं कि वह कैसे जीते हैं।" ऐसे में मोदी या भाजपा के लिए योगी को बाहर का रास्ता दिखाना व्यावहारिक रूप से असंभव होगा।

हालांकि नई दिल्ली में पर्यवेक्षक इस बात पर आश्चर्य जताते हैं कि क्या योगी का मामला वास्तव में इतना ही मजबूत है! वह एनडीए संसदीय दल की बैठक के दौरान दिखे योगी के तनाव की बात करते हैं। वह यह भी रेखांकित करते हैं कि किस तरह दूरदर्शन, योगी का मुरझाया चेहरा न सिर्फ जूम करके दिखाता रहा, वह फीड (क्लिप) अन्य सभी टीवी चैनलों को भी बांटी गई।

सीएसडीएस-लोकनीति सर्वे

उत्तर प्रदेश में एकमात्र असल 'आश्चर्य' सीएसडीएस-लोक नीति द्वारा किए गए चुनाव-बाद सर्वेक्षण में जवाब देने वालों की वह संख्या है जो राहुल गांधी को प्रधानमंत्री के रूप में देखना चाहती है। सर्वे में जहां 32 फीसदी लोगों ने मोदी को प्रधानमंत्री बने रहना पसंद किया, वहीं 36 फीसदी लोगों ने राहुल गांधी को अपनी पसंद बताया। ऐसा लगता है कि राहुल की दो भारत जोड़ो यात्राओं का उस राज्य के मतदाताओं पर कुछ तो प्रभाव पड़ा ही है जहां कांग्रेस तीन दशकों से अधिक समय से सत्ता से बाहर है। अन्यथा तो, सर्वेक्षण के निष्कर्ष पूर्वानुमानों के आधार पर ही थे। उच्च जाति और वैश्य मतदाताओं ने बड़े पैमाने पर भाजपा का समर्थन किया जबकि ओबीसी, एससी और मुस्लिम मतदाताओं ने 'इंडिया' ब्लॉक को प्राथमिकता दी। दस में से नौ राजपूत मतदाता भले ही भाजपा के साथ गए लेकिन गैर-जाटव दलित मतदाता भारी संख्या में 'इंडिया' ब्लॉक की ओर शिफ्ट हो गए।

सर्वेक्षण में माना गया कि समाजवादी पार्टी (सपा) को मुसलमानों और यादवों की पार्टी बताने के आरोपों के मुकाबले में इस बार भाजपा की सोशल इंजीनियरिंग को अखिलेश यादव की पीडीए (पिछड़ा-दलित-अल्पसंख्याक) की वैकल्पिक सोशल इंजीनियरिंग ने जबरदस्त मात दी। सपा ने 32 ओबीसी, 16 दलित, 10 ऊंची जाति के उम्मीदवारों और चार मुसलमनों को टिकट दिया। सर्वेक्षण में मौजूदा भाजपा सांसदों के खिलाफ सत्ता विरोधी लहर का भी जिक्र किया गया जिनमें से 26 सांसद चुनाव हार गए। उन्हें दोबारा नामांकित करना एक गलती थी। कुछ भाजपा नेताओं के इस आशय के बयानों के बाद ओबीसी और दलितों को यह भी डर था कि भाजपा संविधान बदल डालेगी।

नाको चने यूपी में समाजवादी पार्टी-कांग्रेस ने भाजपा और उसके सहयोगियों के लिए पहाड़ जैसी चुनौती खड़ी कर दी। इसने सत्तारूढ़ नेताओं को अब तक किंकर्तव्यविमूढ़ कर रखा है।

सभी फोटोः गेटी इमेजेज

प्रमुख चिंताएं

अंक शब्दों से ज्यादा जोर से बोलते हैं। 2019 में भाजपा को यूपी में 49.6 फीसदी वोट मिले। इस साल, वे आठ प्रतिशत की गिरावट के साथ 41.37 प्रतिशत पर आ गए हैं। वहीं, 37 सीटें जीतकर और 33.59 फीसदी वोट हासिल कर सपा देश की तीसरी सबसे बड़ी पार्टी बन गई है। भदोही में कांग्रेस को 9.46 प्रतिशत और तृणमूल कांग्रेस को 0.47 प्रतिशत वोट मिलने के साथ, इंडिया ब्लॉक की हिस्सेदारी 43.52 प्रतिशत हो गई।

यूपी में शानदार और पूरी तरह से अप्रत्याशित प्रदर्शन दिखाने के बावजूद 'इंडिया' ब्लॉक के भीतर चिंताएं कम नहीं हैं। सांप्रदायिक राजनीति का विरोध करने वाले लोग इस बात से बेहद आश्वस्त हैं कि राम मंदिर के बावजूद भाजपा यूपी में हार गई। हालांकि उनकी चिंता इस बात को लेकर जरूर है कि क्या गठबंधन 2027 के विधानसभा चुनाव तक चल पाएगा। नई दिल्ली के जामिया हमदर्द विश्वविद्यालय के प्रोफेसर अब्दुल कादिर कहते हैं, "भाजपा का उत्तर प्रदेश में समाजवादी पार्टी और कांग्रेस के सांसदों को निशाना बनाने की कोशिश का एक लंबा इतिहास रहा है। ऐसे में यह देखना दिलचस्प होगा है कि दोनों पार्टियां इस चुनौती से किस तरह निपटती हैं।"

केन्द्र में मोदी और अमित शाह की जोड़ी की वापसी के साथ सपा और कांग्रेस दोनों दलों के नेता इस बात को लेकर आशंकित हैं कि 'इंडिया' की रफ्तार कैसे बरकरार रखी जाए और यह भी कि कार्यकर्ताओं का मनोबल कैसे बढ़ाया जाए। एक बड़ी चिंता अपने सांसदों को एकजुट रखना और भाजपा द्वारा अवैध शिकार (खरीद-फ़रोख्त) रोकना भी होगा। ■

प्रकाशकः **पवन कुमार बंसल**; संपादकः **राजेश झा**; **पवन कुमार बंसल द्वारा दि एसोसिएटेड जर्नल्स लिमिटेड,** हेराल्ड हाउस, 5-ए, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली- 11002 की ओर से प्रकाशित एवं मुद्रित। दि एसोसिएटेड जर्नल्स लिमिटेड, हेराल्ड हाउस, 5-ए, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली-110002 और दि इंडियन एक्सप्रेस (प्रा.) लिमिटेड प्रेस, ए-8, सेक्टर-7, नोएडा- 201301, उत्तर प्रदेश से मुद्रित।

उम्मीद की कई वजहें

इस बार का जनादेश खासा अहम है । अयोध्या, वाराणसी, बांसवाड़ा, बनासकांठा जैसी जगहों ने राह दिखाई

उत्तम सेनगुप्ता

मोहम्मद अली जिन्ना द्वारा शुरू किए गए अखबार 'द डॉन' में 5 जून को शीर्षक थाः "इंडिया डिफीट्स हेट, मोदी लेफ्ट एट द मर्सी ऑफ मुस्लिम-फ्रेंडली एलाइज (भारत ने नफरत को हरा दिया, मोदी मुस्लिम-हितैषी सहयोगियों की दया पर निर्भर)"।

पाकिस्तान के पूर्व प्रधानमंत्री मियां नवाज शरीफ ने जब नरेन्द्र मोदी को तीसरी बार प्रधानमंत्री के रूप में शपथ लेने पर बधाई दी, तो उन्होंने भी यही बात दोहराई। उन्होंने आग्रह किया, 'नफरत की जगह उम्मीद लाइए।' यह संदेश, चाहे कोई कुछ भी कहे, फैसले से निकलता है। भाजपा ने केरल में एकमात्र मुस्लिम उम्मीदवार उतारा, वह भी रणनीतिक कारणों से और केन्द्र सरकार में उसका एक भी मुस्लिम मंत्री नहीं है। हालांकि न केवल मुसलमान, बल्कि देश भर के मतदाताओं ने नफरत की सियासत को खारिज कर दिया है जिसका खुद प्रधानमंत्री ने माहौल बनाया था। काफी हिन्दुओं ने मोदी को अच्छे से समझ लिया क्योंकि वह मुसलमानों के पीछे पड़े थे, अपने भाषणों में 'जो लोग ज्यादा बच्चे पैदा करते हैं', 'वे आपका मंगलसूत्र भी छीन लेंगे' और 'आपकी भैंस' भी और इन्हें 'घुसपैठियों' को दे देंगे वह मुससलमानों को हर तरीके से अपमानजनक संदर्भों के साथ संबोधित कर रहे थे।

भाजपा न केवल फैजाबाद निर्वाचन क्षेत्र हारी जिसमें अयोध्या भी शामिल है बल्कि इसमें पड़ने वाले छह में से चार विधानसभा क्षेत्रों में उसे हार का सामना करना पड़ा। विडंबना यह है कि फैजाबाद से एक दलित जीता। देश के दक्षिणी छोर पर पड़ने वाले रामेश्वरम में जहां 84 प्रतिशत हिन्दू हैं, वहां एक मुसलमान जीता।

जबकि पोल रणनीतिकार प्रशांत किशोर ने भाजपा की ही इस लाइन को दोहराया कि कि कांग्रेस ने इसलिए बेहतर प्रदर्शन किया क्योंकि मुसलमानों ने उसे एकमुश्त वोट दिया जबकि हकीकत यह है कि मुसलमानों ने नहीं बल्कि हिन्दुओं ने महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, हरियाणा और बंगाल में भाजपा को हराया। वाराणसी में खुद मोदी की जीत का अंतर 2019 के 4.8 लाख वोटों से घटकर 2024 में 1.5 लाख रह गया। यह तब है जब लगभग पूरा केन्द्रीय मंत्रिमंडल, उत्तर प्रदेश प्रशासन और केन्द्रीय गृह मंत्री अमित शाह हफ्तों तक वाराणसी में डेरा डाले रहे। मोदी को वाराणसी में मुसलमानों ने ही नहीं बल्कि हिन्दुओं ने सबक सिखाया। काशी कॉरिडोर बनाने, विश्वनाथ मंदिर का जीर्णोद्धार करने और शहर के चारों ओर नई अच्छी सड़कें बनाने, लेजर शो, गंगा पर रिवर क्रूज और 'गंगा आरती' के बारे में उनके सारे दावे धरे के धरे रह गए। गुजरात का बनासकांठा ऐसा निर्वाचन क्षेत्र है जहां ज्यादातर लोग अपनी आजीविका के लिए डेयरी पर निर्भर हैं। मोदी ने दावा किया था कि अगर डेयरी किसानों के पास दो भैंसें हैं, तो कांग्रेस सरकार उनमें से एक को छीनकर किसी मुसलमान को दे देगी। राजस्थान के बांसवाड़ा में, उन्होंने मतदाताओं जिनमें ज्यादातर आदिवासी हैं, को चेताया था कि अगर कांग्रेस सत्ता में आई तो मुसलमानों को फायदा पहुंचाने के लिए आदिवासियों के आरक्षण को कम कर देगी। बनासकांठा में गेनी बेन ठाकोर और तीन साल पहले बनी बीएपी (भारत आदिवासी पार्टी) के राजकुमार रोत अप्रत्याशित रूप से विजयी हुए।

'बनास नी बेन' (बनासकांठा की बहन) गेनी बेन का मुकाबला संसाधन संपन्न भाजपा से था जिसका 15,000 करोड़ रुपये के सालाना कारोबार वाले जिला डेयरी सहकारी पर नियंत्रण है। न तो निम्न मध्यम वर्गीय परिवार से आने वाली गेनी बेन के पास पैसे थे और न कांग्रेस के पास। लेकिन उन्होंने हिम्मत नहीं हारी और प्रचार अभियान के लिए क्राउडफंडिंग का सहारा लिया। प्रत्येक मतदाता से 111 रुपये के 'शगुन' के रूप में दान देने की अपील की। इस तरह गेनी बेन ने तमाम बाधाओं के बावजूद जीत हासिल की और कांग्रेस को राज्य में फिर से पैर जमाने का मौका दिया। बनासकांठा जिले से विधायक कांग्रेस नेता जिग्नेश मेवाणी ने कहा, 'उनकी जीत बहुत बड़ी है क्योंकि वह न केवल भाजपा के खिलाफ बल्कि राज्य मशीनरी, पुलिस द्वारा समर्थित शराब तस्करों और सहकारी संस्थाओं के खिलाफ भी लड़ रही थीं।'

बांसवाड़ा में बीएपी को 'इंडिया' गठबंधन का समर्थन प्राप्त था लेकिन एक कांग्रेस बागी ने नाम वापस लेने से इनकार कर दिया। भाजपा ने बीएपी संस्थापक राजकुमार रोत के नाम वाले कई निर्दलीय उम्मीदवारों को खड़ा करके भ्रम पैदा करने की कोशिश की। फिर भी, हिन्दू और आदिवासी वोटों के कारण 'इंडिया' गठबंधन जीत गया। बीएपी ने चार पड़ोसी राज्यों के 39 जिलों को मिलाकर एक अलग 'भील प्रदेश' बनाने की मांग को भी भुनाया।

***

जहां हिन्दुओं ने कट्टरता के खिलाफ लड़ाई लड़ी और नफरत और इस्लामोफोबिया को हराने में मदद की, तो उत्तर प्रदेश में भाजपा के खिलाफ माहौल बनाने में ग्रामीण संकट बड़ा कारण बना। युवाओं में बेरोजगारी इतनी अधिक है कि युवाओं की शादी नहीं हो पा रही है। चार साल के लिए अनुबंध पर युवाओं को सैनिक के रूप में नियुक्त करने की 'अग्निवीर' योजना से कोई मदद नहीं मिली और युवा नशे की ओर मुड़ गए और मोबाइल की दुनिया में खो गए। जब राहुल गांधी ने वाराणसी में युवाओं को अपने मोबाइल फोन से चिपके हुए देखने के बारे में बात की और चेतावनी दी कि अमीरों के बच्चे वीडियो देखने में नहीं बल्कि पैसे बनाने में व्यस्त हैं, तो उन्हें बुरी तरह ट्रोल किया गया लेकिन शायद यह संदेश घर-घर पहुंच गया।

कृषि संकट और प्याज के निर्यात पर मनमाने प्रतिबंध- महाराष्ट्र में बैन और गुजरात में प्रतिबंध में ढील- ने भी अपना असर दिखाया। गेहूं किसान परेशान थे कि सरकार कानूनी तौर पर गारंटीशुदा एमएसपी देने से इनकार कर रही है जबकि गेहूं के आयात पर शुल्क कम कर रही है। गिरती मजदूरी, बढ़ती इनपुट लागत और असमानता और गांव के लोगों के लिए सबसे बड़े नियोक्ता सेना एवं रेलवे में नौकरियों के सूखने से ग्रामीण संकट बढ़ गया जिसका खामियाजा मोदी की भाजपा को पूरे देश में भुगतना पड़ा। लगभग 300 ग्रामीण निर्वाचन क्षेत्रों ने बदलाव के लिए और भाजपा और एनडीए के खिलाफ मतदान किया।

भाजपा की डराने-धमकाने की रणनीति सूरत, गांधीनगर और इंदौर में कहीं स्पष्टता के साथ दिखी। सूरत में सभी दलों के उम्मीदवारों ने पहले नामांकन भरा और फिर रहस्यमय तरीके से अपना नामांकन वापस ले लिया। गांधीनगर जहां 'अमित भाई' रिकॉर्ड अंतर से जीतना चाहते थे, पुलिस ने उम्मीदवारों पर नामांकन वापस लेने का दबाव डाला और चुनाव आयोग के पास लिखित शिकायतें भी की गईं लेकिन इसका कोई फायदा न हुआ। सूरत में हुई नौटंकी को मध्य प्रदेश के इंदौर में भी दोहराने की कोशिश की गई लेकिन वामपंथी उम्मीदवार ने मैदान से हटने से इनकार कर दिया जिससे मुकाबला अपरिहार्य हो गया। लेकिन पुलिस द्वारा 18 साल पुराने मामले में 'हत्या के प्रयास' का आरोप जोड़ने के बाद कांग्रेस उम्मीदवार को हटने के लिए मजबूर होना पड़ा। इस पर नाराजगी जताने के लिए कार्यकर्ताओं ने 'नोटा' (उपर्युक्त में से कोई नहीं) के पक्ष में वोट देने का अभियान चलाया और यहां नोटा ने 2.18 लाख वोटों के साथ एक रिकॉर्ड बनाया।

पूर्वोत्तर ने भी भाजपा की घोर सांप्रदायिक राजनीति के खिलाफ मतदान किया। मणिपुर में जो अब भी गृहयुद्ध की चपेट में है, कांग्रेस ने दोनों लोकसभा सीटें जीतीं। हालांकि उसके एक ही सीट जीतने की उम्मीद थी। मैतेई और कुकी-जो आदिवासी समुदायों- दोनों ने केन्द्र और राज्य सरकारों की विभाजनकारी राजनीति के खिलाफ मतदान किया। असम के मुख्यमंत्री हिमंत बिस्वा सरमा ने चुनाव परिणामों के लिए ईसाइयों को दोषी ठहराया लेकिन यहां तक कि वह असम में सारे घोड़े खोलने के बाद भी कांग्रेस को तीन सीटें जीतने से नहीं रोक पाए। चौंकाने वाली बात यह है कि कांग्रेस का वोट शेयर 37.5 प्रतिशत रहा जो उसके अपने पिछले वोट शेयर से दोगुना तो है ही, भाजपा के 37.4 प्रतिशत से भी अधिक रहा। इन चुनावों में धनबल के बेशर्मी से इस्तेमाल के बीच एक और उत्साहजनक बात यह है कि ऐसे कई उम्मीदवार जीते जो वस्तुतः कंगाल थे। बनासकांठा (गुजरात) में गेनी बेन और भरतपुर (राजस्थान) से संजना जाटव जैसे उम्मीदवारों ने क्राउडसोर्सिंग से धन जुटाया और जीत हासिल की। अगर ऐसा हो सकता है, तो अब भी उम्मीद है। ■

फोटोः गेटी इमेजेज

हकीकत यह है कि मुसलमानों ने नहीं बल्कि हिन्दुओं ने महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, हरियाणा और बंगाल में भाजपा को हराया। वाराणसी में खुद मोदी की जीत का अंतर 2019 के 4.8 लाख वोटों से घटकर 2024 में 1.5 लाख रह गया। यह तब है जब लगभग पूरा केन्द्रीय मंत्रिमंडल, उत्तर प्रदेश प्रशासन और केन्द्रीय गृह मंत्री अमित शाह हफ्तों तक वाराणसी में डेरा डाले रहे। मोदी को वाराणसी में भी मुसलमानों ने ही नहीं बल्कि हिन्दुओं ने भी सबक सिखाया

चुराया हुआ जनादेश?

अवकाश प्राप्त नौकरशाह एम.जी. देवसहायम ने नेशनल हेरल्ड के साथ बातचीत में कहा कि निष्पक्ष चुनाव सुनिश्चित करने की जगह निर्वाचन आयोग ने धोखेबाजी का पूरा मौका दिया

एम.जी. देवसहायम ने उपहास वाली मुस्कान के साथ कहा कि 'हम 2019 से ही 'रूस के जैसा' चुनाव देख रहे हैं और 2024 में कुछ अलग नहीं था।' 83 साल के पूर्व नौकरशाह देवसहायम कंस्टीच्यूशनल कंडक्ट ग्रुप (सीसीजी) और सिटिजन्स कमीशन ऑन इलेक्शंस (सीसीई) के प्रमुख सदस्य हैं। उनका कहना है कि नौकरशाहों और निर्वाचन आयोग की सरकार में बदलाव के लिए जनता के मत को चुराने में भागीदारी थी। वह कहते हैं कि 'इसे सफाई से चुरा लिया गया' और विशेषज्ञ तथा सिविल सोसाइटी समूह आंकड़ों को गौर से देख रहे हैं ताकि इसका ठीक से कैसे खुलासा कर सकें।

नेशनल हेरल्ड ग्रुप के संपादकों के साथ ऑनलाइन अनौपचारिक बातचीत में उन्होंने कहा कि इन सब में वह चालाकी है कि संतोष का झूठा भाव पैदा हो गया है, यह ऐसी 'जीत' है जिसे विपक्ष और जनता भी मान ले रही है। उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि 'वे लोग जनता की आंखों में धूल झोंकने में सफल रहे हैं और विपक्ष सिर्फ अपने को ही दोषी मान रहा है।' उन्होंने विपक्षी दलों पर भी सीसीजी और सीसीई-जैसे सिविल सोसाइटी समूहों के किए कामों को भाव न देने का आरोप लगाया।

देवसहायम कहते हैं कि ईवीएम की विश्वसनीयता पर सुप्रीम कोर्ट के 'सुस्त' फैसलों ने जनादेश में छेड़छाड़ करने का चुनाव आयोग को मौका दे दिया। अब मीडिया रिपोर्टों में कहा गया है कि जितना मतदान हुआ, आयोग ने उससे अधिक मतों की गणना की। thequint.com ने खबर दी कि 176 क्षेत्रों में 35,000 से अधिक वोट 'अतिरिक्त' थे और 362 सीटों पर कम-से-कम 5.5 लाख वोटों की गिनती नहीं की गई। निश्चित तौर पर साफ प्रमाण है कि यह चुराया हुआ जनादेश है।

***

सीसीजी 2018 से ही चुनावों और चुनाव व्यवस्था का गंभीरता से अध्ययन कर रहा है। इसी साल चुनावी बॉण्ड योजना और वीवीपैट यूनिट लागू हुई। इसी साल उप चुनाव आयुक्त के तौर पर एक नौकरशाह को तैनात किया गया। देवसहायम याद करते हैं कि 'हमारे सूत्रों ने इस सज्जन के आरएसएस के साथ रिश्ते को लेकर हमें अलर्ट किया। यही वह साल था जब से आयोग ने हमारी चिट्ठियों का संज्ञान लेना और उत्तर देना बंद कर दिया।' सीसीजी ने चुनावी गोरखधंधों पर अपनी पहली विस्तृत रिपोर्ट 2021 में दी। देवसहायम कहते हैं कि हालांकि, इसे सभी राजनीतिक दलों के साथ शेयर किया गया लेकिन उस वक्त सिर्फ पश्चिम बंगाल की मुख्यमंत्री ममता बनर्जी ने खतरे को समझा। विवादास्पद उपायुक्त विधानसभा चुनाव के दौरान पश्चिम बंगाल में तैनात थे और यह ममता बनर्जी का कड़ा प्रतिरोध ही था कि उन्हें वापस आना पड़ा।

2019 चुनावों ने सीसीजी की प्रारंभिक आशंकाओं की पुष्टि की है। यही तरीका पिछले साल मध्य प्रदेश, राजस्थान और छत्तीसगढ़ विधानसभा चुनावों समेत बाद के सभी चुनावों में दोहराया गया। उन्होंने कहा कि 'हमें मध्य प्रदेश में भाजपा की स्पष्ट जीत पर संदेह है। कम-से-कम 60 लोकसभा क्षेत्र ऐसे हैं जहां जोड़तोड़ का संदेह है; एक टेक्निकल ग्रुप परिणामों का अध्ययन कर रहा है। इसके नतीजों को जनता के सामने लाया जाएगा।' देवसहायम कहते हैं कि 'न्यायपालिका और निर्वाचन आयोग पर से हमारा विश्वास बिल्कुल खत्म हो गया है।' पिछले छह साल में सिविल सोसाइटी समूहों ने आयोग को असंख्य चिट्ठियां लिखी हैं; कई मुद्दे उठाए हैं; दो रिपोर्ट पेश की हैं और राष्ट्रीय तथा प्रादेशिक आयोजन किए हैं। कांग्रेस के दिग्विजय सिंह ने जयपुर सम्मेलन में प्रेजेन्टेशन दिया। उसके बाद एक अध्ययन दल का गठन किया जाना था। लेकिन ऐसा कभी नहीं हुआ।

***

चुनावी शुद्धता पर जन आयोग का गठन हो चुका है। अंतरराष्ट्रीय विशेषज्ञों और प्रतिनिधियों के साथ वाला टेक्निकल ग्रुप भी बनाया जा चुका है। कानूनी विशेषज्ञों का एक समूह जन प्रतिनिधित्व कानून के प्रावधानों के आधार पर चुनाव को चुनौती देने का मसला देख रहा है। वीवीपैट पर्चियों की गिनती के जरिये पुष्टिकरण और प्रमाणीकरण वाले कदमों को रोककर आयोग ने लोकतांत्रिक चुनाव के आधारभूत सिद्धातों का किसी भी तरह उल्लंघन ही किया है। देवसहायम ने इस बात पर व्यंग्य किया कि वीवीपैट मशीन से निकलने वाली पर्ची में चुनाव चिह्न की इमेज निकलता देखकर मतदाता को संतुष्ट करने की बात लागू कर इसने चुनाव को बायस्कोप भर में बदल दिया है।

आपने जिसे वोट दिया, वोट उसे ही गया, इसकी पुष्टि करने से रोकने के साथ कुल कितने वोट पड़े, इसका आंकड़ा देने में आयोग की विफलता और फिर, जो आंकड़ा उपलब्ध है, उसे शेयर करने में भी अत्यधिक देर- पहले चरण के विवरण देने में 11 दिन लग गए- ने अविश्वास को और गहरा किया है। उन्होंने कहा कि कम मार्जिन और भारी मतों- दोनों से हुई जीत को गहराई से देखने की जरूरत होगी। इस बारे में उन्होंने अशोका यूनिवर्सिटी के प्रो. सब्यसाची दास के एक पेपर का संदर्भ दिया जिसमें संकेत किया गया है कि निकट के अंतर से जीतने का भाजपा का आंकड़ा बेडौल रहा है।

देवसहायम कहते हैं कि सिविल सोसाइटी समूह आयोग पर दबाव ढीला नहीं करेंगे। उदाहरण के लिए, सुप्रीम कोर्ट ने आयोग को सिंबल लोडिंग यूनिट्स (एसएलयू) को स्ट्रांग रूम में रखने को कहा था। हम देखेंगे कि इसे आयोग ने लागू किया या नहीं। कोर्ट ने यह भी कहा था कि परिणाम घोषित करने के एक सप्ताह के अंदर विजेता और उपविजेता (के शुल्क जमा करने पर) पांच प्रतिशत ईवीएम यूनिट की एक सप्ताह के अंदर जांच की जाएगी और उनका मिलान किया जाएगा।

देवसहायम कहते हैं कि न तो चुनाव व्यवस्था पर्याप्त सुदृढ़ है और न चुनाव आयोग पारदर्शी और जवाबदेह है। ■

हमें और आंदोलन करना चाहिए

हम लोकतंत्र बचाने में सफल हो गए हैं लेकिन अब भी बहुत कुछ करना बाकी है। उदार और धर्मनिरपेक्ष ताकतों को उत्प्रेरक बनना होगा

तुषार गांधी

सत्याग्रह अचूक ताकत लोकतंत्र की रक्षा करने में भारतीयों ने बड़ी सफलता हासिल की है। यह प्रक्रिया भारतीयों से साहसी बनने का आह्वान भी करती है जो आज की सबसे बड़ी जरूरत है।

गांधी इस देश की सामूहिक चेतना में अब भी स्वतंत्रता के प्रतीक बने हुए हैं, वास्तविकता यह है कि हम अपनी स्वतंत्रता के लिए आम भारतीयों की अदम्य भावना, मजबूत इच्छा शक्ति और दृढ़ संकल्प के ऋणी हैं जिनके बूते ब्रिटिश साम्राज्य से लड़ाई लड़ी और जीती गई।

स्वतंत्र भारत के पहले चार दशक इसके गौरवशाली वर्ष थे। स्वतंत्रता के बाद, स्वतंत्र भारत के नागरिकों ने एक ऐसे राष्ट्र के निर्माण में बहुत बड़ा योगदान दिया जो जन्म के साथ ही तबाह हो गया था। भारतीयों की उस पीढ़ी ने हमारे नवजात लोकतंत्र की एक मजबूत नींव रखी। लेकिन उसके बाद की पीढ़ी अपने बारे में ज्यादा सोचने वाली थी। हमारी राजनीति, हमारे समाज की तरह ही लोभी और आत्म-केन्द्रित बन गई। यही वह समय था जब आरएसएस की कट्टरपंथी, विभाजनकारी ताकतों ने नफरत का अपना घातक अभियान शुरू किया। जहर तेजी से दिमाग और सार्वजनिक विमर्श में भरता गया। राजनीतिक दृष्टि धुंधली हो गई; उदार, लोकतांत्रिक स्थान संकुचित हो गए।

आज दुर्भाग्यवश बहुत सारे हिन्दू कट्टरपंथी हो गए हैं। उन्हें धर्म का सच्चा ज्ञान नहीं है और उनके दिमाग में 'राजनीतिक हिन्दुत्व' के दुष्ट, सत्ता-हथियाने वाले विचार भर गए हैं। हमें हिन्दुओं को यह समझने में मदद करनी चाहिए कि हिन्दू धर्म और हिन्दुत्व एक दूसरे के बिल्कुल विपरीत हैं- एक आध्यात्मिक जीवन शैली है तो दूसरा सत्ता हथियाने का राजनीतिक साधन। भारत का संविधान संघीय व्यवस्था की ओर अधिक मजबूती से आगे बढ़ने और संघ की 'अखंड' कल्पनाओं को उजागर करने का हमारा तंत्र है। संविधान ही हमारी एकमात्र तलवार भी होनी चाहिए और ढाल भी। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को वापस पाने का एक ही तरीका है- इसका प्रयोग करना। 'निर्भय बनो'। गैर-हिन्दुओं के प्रति आक्रामकता के माध्यम से नहीं, बल्कि किसी से न डरते हुए अपनी बात कहने का साहस पाकर। राहुल गांधी ने लोगों से न डरने का आग्रह करके इसकी शुरुआत की- उनका 'डरो मत!' का आह्वान बिल्कुल सही है। मैं महात्मा गांधी को उद्धृत करता हूं: 'यदि हमारे नेता वह कर रहे हैं जो आपकी राय में गलत है, और यदि हम उन्हें अपनी बात सुनाना कर्तव्य समझते हैं, भले इसे देशद्रोह माना जाए, तो मैं आपसे देशद्रोह का आग्रह करता हूं- लेकिन अपने जोखिम पर। आपको इसके परिणाम भुगतने के लिए तैयार रहना चाहिए।' मीडिया को झूठ फैलाने के लिए दंडित किया जाना चाहिए लेकिन इसे दबाने और नियंत्रित करने के लिए नहीं। यह स्वतंत्र और निष्पक्ष होना चाहिए। जहां तक सहयोगी दलों के बीच दरार पैदा करने के भाजपा के प्रयासों का विरोध करने की बात है, तो इंडिया ब्लॉक को मतभेदों के बावजूद एकजुट रहना चाहिए। अलगाववादियों को हराने का दृढ़ संकल्प उसे एक मजबूत प्रतिद्वंद्वी के रूप में परस्पर बांधने वाला गोंद बनना चाहिए। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस को एक जोड़ने वाले एजेंट की भूमिका निभानी होगी। इसके लिए, कांग्रेस को व्यापक पुनर्रचना और संरचनात्मक परिवर्तन की जरूरत है। पार्टी का ऊपरी भाग बहुत भारी है जिसके कारण कार्यकर्ता भ्रमित और निराश हैं। कांग्रेस कार्यकर्ताओं को पार्टी की विरासत और परंपरा के बारे में शिक्षित करने की जरूरत है। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि उनकी निष्ठा पार्टी के प्रति होनी चाहिए, न कि नेताओं के प्रति। सहयोगी संगठनों, खास तौर पर सेवा दल, युवक कांग्रेस, एनएसयूआई (भारतीय राष्ट्रीय छात्र संघ), महिला कांग्रेस और साथ ही इसके श्रमिक संघों को पुनर्जीवित किया जाना चाहिए और मातृ पार्टी द्वारा उन्हें आवश्यक स्वतंत्रता दी जानी चाहिए। कांग्रेस को यह नहीं भूलना चाहिए कि एम.के. गांधी ने अहमदाबाद में भारत के पहले संगठित औद्योगिक व्यापार संघ 'मजूर महाजन' की स्थापना की थी जो आज भी मौजूद है। इन अग्रणी संगठनों को पार्टी की प्रारंभिक पहुंच शाखा बनना चाहिए। मातृ पार्टी को बौद्धिक इनपुट और रणनीति उपलब्ध कराने तक ही सीमित रहना चाहिए। लोकतंत्र के अन्य स्तंभों की तरह न्यायपालिका को भी अपने जमीर को खोजना चाहिए। न्यायपालिका के एक बहुत बड़े भाग ने नैतिकता को छोड़ दिया है और यह भूल गया है कि वे संविधान और भारत के लोगों की सेवा करते हैं, न कि सत्ता में बैठे नेताओं की। निचले और मध्यम स्तर की न्यायपालिका को सार्वजनिक समीक्षा के अधीन होना चाहिए जो उनके पद पर बने रहने और पदोन्नति को निर्धारित करे। लोगों को न्याय मिले, इसे मजबूत करने के उद्देश्य से उन्हें अपने काम के लिए जवाबदेह ठहराया जाना चाहिए। जहां तक नए बनाए गए कानूनों- न्याय संहिता, पीएमएलए, यूएपीए, सीएए/एनआरसी, आईटी और टेलीग्राफ अधिनियम- का सवाल है, उन्हें फिर से लिखने का दबाव संसद के भीतर से ही नहीं बल्कि सड़कों से भी आना चाहिए। हाल के दिनों में, हमने जनशक्ति की क्षमता देखी है। अगर कोविड हस्तक्षेप नहीं करता, तो सरकार को सीएए/एनआरसी पर विरोध के आगे झुकना पड़ता। किसानों ने आखिर पीएम को कठोर कृषि कानूनों को छोड़ने के लिए मजबूर करने में सफलता पाई; मेरा मानना है कि वे प्रधानमंत्री को उनके द्वारा किए गए वादों को पूरा करने के लिए मजबूर करने में सफल होंगे। बिहार के छात्र नेताओं तक अपने असंतोष, गुस्से को पहुंचाने और उन्हें छात्रों के भविष्य के बारे में चिंता करने के लिए बाध्य करने में सफल रहे। सत्याग्रह अब भी भारत में एक अचूक शक्ति है, यह अब भी प्रासंगिक है।

> राहुल गांधी का 'डरो मत!' का आह्वान बिल्कुल सही है। महात्मा गांधी ने कहा ही था: 'यदि हमारे नेता वह कर रहे हैं जो आपकी राय में गलत है, और यदि हम उन्हें अपनी बात कहना कर्तव्य समझते हैं, भले इसे देशद्रोह माना जाए, तो मैं आपसे देशद्रोह का आग्रह करता हूं- लेकिन अपने जोखिम पर। आपको इसके परिणाम भुगतने के लिए तैयार रहना चाहिए'

अगर एक समाज के रूप में हम अपने लोकतांत्रिक अधिकारों के साथ-साथ अपनी जिम्मेदारियों और कर्तव्यों के बारे में अधिक जागरूक और प्रबुद्ध हो जाते हैं, तो 'हम भारत के लोग' अपने लोकतंत्र में प्रमुख शक्ति बन जाएंगे। उदार, धर्मनिरपेक्ष ताकतों को इस प्रक्रिया को तेज करने के लिए उत्प्रेरक बनना चाहिए। हम बहुत ज्यादा विनम्र हो गए हैं; हमें और अधिक आंदोलन करना चाहिए। 2024 में हम लोग अपने लोकतंत्र की रक्षा करने में सफल हो गए हैं, लेकिन अब भी बहुत कुछ करना बाकी है। यह प्रक्रिया भारतीयों से साहसी बनने और राष्ट्र तथा हमारे लोकतंत्र के लिए बलिदान देने का आह्वान करती है। ■

तुषार गांधी महात्मा गांधी के प्रपौत्र हैं।

जमीनें निगलती जा रही है ब्रह्मपुत्र

जीवन संघर्ष महेश्वर चमुआ जिनका घर ब्रह्मपुत्र ने निगल लिया, तब उन्हें सल्मोरा में शरण लेनी पड़ी। रूमी हजारिका जो नदी में भटक-भटककर जलावन की लकड़ी इकट्ठा करती हैं जिसे बाद में बेच कर जीवन चलाती हैं।

फोटो सौजन्य: निकिता चटर्जी ruralindiaonline.org

> पिछले कई दशकों से हर साल बाढ़ आने के कारण माजुली द्वीप के इस गांव में खेती-किसानी से जुड़े रोजगार में भारी कमी आई है। नाव बनाने जैसे दूसरे पारंपरिक व्यवसायों से होने वाली आमदनी भी स्थिर नहीं रह गई है

निकिता चटर्जी

महेश्वर चमुआ के दिलोदिमाग पर उस दिन की याद बिल्कुल ताजा है जब बाढ़ की वजह से उन्हें पहली बार अपना आसरा बदलना पड़ा था। तब वह केवल पांच साल के थे। अब 60 साल की उम्र पार कर चुके चमुआ उस अचानक आई विपदा के बारे में बताते हैं, "पानी हमारे गांव के एक घर को बहा ले गया था। हम जल्दी-जल्दी अपनी नावों पर सवार हुए, और सुरक्षित ठिकाने की तलाश में वहां से भाग निकले। हमें द्वीप के पास की एक जमीन पर आसरा मिला।"

चमुआ की तरह असम में नदी के एक द्वीप माजुली के 1.6 लाख निवासियों पर बार-बार आने वाली इन बाढ़ों और दिन-प्रतिदिन कम होती जमीनों का बुरा असर पड़ा है। इस नदी की जमीन 1995 के मोटा-मोटी 1,245 वर्ग किलोमीटर से सिकुड़कर 2017 में 703 वर्ग किलोमीटर रह गई है। यह आंकड़ा जिला आपदा प्रबंधन प्राधिकरण की एक रिपोर्ट पर आधारित है।

चमुआ बताते हैं कि यह वास्तव में सल्मोरा नहीं है। सल्मोरा को तो कोई 43 साल पहले ब्रह्मपुत्र नदी लील गई। उसके बाद ब्रह्मपुत्र और उसकी सहायक नदी सुबनसिरी ने नए शालमरा का निर्माण किया। चमुआ अपनी पत्नी, बेटी और बेटे के परिवार के साथ पिछले 10 सालों से यहीं रहते हैं।

उनका नया घर एक अधूरा ढांचा है जो सीमेंट और मिट्टी से बना है। शौचालय तक जो घर के बाहर बना है, एक सीढ़ी के जरिये ही पहुंचा जा सकता है। वह कहते हैं कि हर साल हमारी थोड़ी जमीन को ब्रह्मपुत्र का पानी बहा ले जाता है।

बार-बार आने वाली बाढ़ ने गांव में खेतीबाड़ी को बुरी तरह से प्रभावित किया है। शालमरा के सरपंच ईश्वर कहते हैं कि हम चावल, माटी दाल (उड़द की दाल), और बैंगन या पत्तागोभी जैसी सब्जी-तरकारी नहीं उगा सकते हैं। अब किसी के पास जमीन बची ही नहीं। बहुत से ग्रामीणों ने नाव बनाने, मिट्टी के बर्तन बनाने और मछली पकड़ने जैसे दूसरे काम शुरू कर दिए हैं।

चमुआ कहते हैं कि शालमरा में बनाए गए नावों की मांग पूरे द्वीप में है। वह खुद भी नावें बनाते हैं। चपोरियों (छोटे टापू) में रहने वाले लोगों को नदी पार करने के लिए नावों का ही सहारा लेना पड़ता है– मसलन, बच्चों को स्कूल आने-जाने के लिए, मछलियां पकड़ने के लिए और बाढ़ के दिनों में।

नाव बनाने का हुनर चमुआ ने खुद सीखा है; यह काम वे तीन लोगों के एक समूह में करते हैं। नाव बनाने के लिए हिजल गुरि की जरूरत होती है। यह एक महंगी लकड़ी है जो बहुत आसानी से नहीं मिलती है। इस लकड़ी का उपयोग इसलिए किया जाता है क्योंकि चमुआ के मुताबिक, यह मजबूत और टिकाऊ होती है। वह इस लकड़ी को शालमरा और आसपास के गांवों के विक्रेताओं से खरीदते हैं।

एक बड़ी नाव को बनाने में एक सप्ताह का समय लग जाता है, और छोटी नाव पांच दिन में तैयार हो जाती है। चूंकि इस काम में एक साथ कई लोग शामिल रहते हैं, इसलिए वे सभी मिलकर महीने में 5 से 8 नावें बना सकते हैं। एक बड़ी नाव जिस पर 10-12 लोग और तीन मोटरसाइकिलें सवार हो सकती हैं, की कीमत 70,000 तक हो सकती है जबकि एक छोटी नाव 50,000 तक में बिकती है। यह आमदनी दो-तीन लोगों में बंट जाती है। नाव बनाने से होने वाली कमाई के बारे में पक्के तौर पर कुछ नहीं कहा जा सकता है क्योंकि नाव बनाने के अधिकतर ऑर्डर मानसून और बाढ़ के समय आते हैं। इसलिए चमुआ के पास कई महीनों से काम नहीं है और उनकी कोई स्थायी मासिक आमदनी नहीं है।

> बार-बार आने वाली बाढ़ ने गांव में खेतीबाड़ी को बुरी तरह से प्रभावित किया है। शालमरा के सरपंच ईश्वर कहते हैं कि हम चावल, उड़द की दाल, और बैंगन या पत्तागोभी जैसी सब्जी-तरकारी नहीं उगा सकते हैं। अब किसी के पास जमीन बची ही नहीं। बहुत से ग्रामीणों ने नाव बनाने, मिट्टी के बर्तन बनाने और मछली पकड़ने जैसे दूसरे काम शुरू कर दिए हैं

लगभग 50 वर्ष की रूमी हजारिका एक कुशल मल्लाह हैं। जब बाढ़ आती है, तब वह जलावन की लकड़ी इकट्ठा करने के लिए डोंगी लेकर नदी में निकल जाती हैं। उन लकड़ियों को गांव के बाजार में बेचकर उन्हें प्रति क्विंटल कुछ सौ रुपयों की कमाई हो जाती है। वह कलह माटी (काली मिट्टी) से बनाए गए अपने बर्तनों को भी 15 रुपये प्रति बर्तन की दर पर गरमूर और कमलाबाड़ी में बेचती हैं। मिट्टी के बने लैंप 5 रुपये में बिकते हैं।

वह कहती हैं कि अपनी जमीनों के साथ-साथ हम अपने परंपरागत काम-धंधे भी गंवाते जा रहे हैं। हमारी काली माटी को भी ब्रह्मपुत्र बहाकर ले जा रही है। ■

अनुवाद: देवेश। साभार: ruralindiaonline.org

पर्यावरण पर बहुत भारी पड़ेगा ऐसा कांवड़िया प्रेम

उत्तर प्रदेश में मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ कांवड़ियों पर कुछ इस तरह मेहरबान हुए कि उनकी राह आसान करने को लाखों हरे-भरे और पुराने पेड़ काटने की मुहिम चला दी

रश्मि सहगल

"शिव की बारात में डीजे नहीं बजेंगे तो क्या शव यात्रा में बजेंगे?'' मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ ने कांवड़ यात्रा के दौरान कांवरियों को लाउडस्पीकर पर डीजे बजाते हुए बेधड़क चलने को इन्हीं शब्दों में उचित ठहराया था। कांवड़ यात्रा, यानी कभी का एक पारंपरिक तीर्थ पथ जिसका उपयोग गंगा का पवित्र जल अन्य शहरों तक ले जाने के लिए किया जाता था। डीजे के कारण इस पथ पर अब न सिर्फ डेसीबल का स्तर कई गुना बढ़ चुका है, बल्कि हरिद्वार और वाराणसी से आने वाले रास्ते में खुले ट्रकों पर डीजे के साथ महिलाएं भी खूब नृत्य करती दिखाई देती हैं।

सत्ताधारी पार्टी के लिए यह कांवड़ यात्रा इतनी महत्वपूर्ण है कि जिस रास्ते से ये कांवड़िये गुजरते हैं, (योगी आदित्यनाथ के निर्देश पर) उन पर गुलाब की पंखुड़ियां बरसाने के लिए हेलीकॉप्टर किराये पर लिए जाने लगे। हर कुछ सौ कदम की दूरी पर उन्हें खाना खिलाया जाता है, स्वागत होता है। हाल के कुछ वर्षों में इनकी संख्या खासी बढ़ी है। पिछले साल सरकार ने गणना कराई थी कि पोंटा साहिब के लेकर ऊपरी गंगा नहर के साथ 111 किलोमीटर की दूरी पर मुजफ्फरनगर में पुरकाजी से लेकर मेरठ में सरधना और जानी और गाजियाबाद में मुरादनगर तक विभिन्न मार्गों से गुजरने वाले कांवड़ियों की संख्या एक करोड़ से अधिक थी।

राजमार्गों पर उमड़ने वाली इस भीड़ की सुविधा के लिए राज्य सरकार ने एक लाख से अधिक पेड़ और झाड़ियां काटना तय किया है। प्रस्ताव है कि कांवड़ियों की सुविधा के लिए नहर किनारे बनी सड़क चौड़ी की जाए। इसके लिए ऊपरी गंगा नहर के किनारे लगे एक लाख से ज्यादा हरे पेड़ों और झाड़ियों की बलि दे दी जाए। सड़क चौड़ीकरण की इस कवायद पर राज्य के खजाने से 1,000 करोड़ रुपये से अधिक खर्च होंगे।

दो साल पहले मेरठ के नागरिकों तक पहली बार इस परियोजना की खबर पहुंची तो व्यापक विरोध प्रदर्शन हुआ। जागरूक नागरिक एसोसिएशन के प्रमुख गिरीश शुक्ला ने 'चिपको' की तर्ज पर आंदोलन शुरू कर दिया। लोग सरधना तीन नहर का पुल पर एकत्र हुए और पर्यावरण के लिए उनका महत्व उजागर करने वास्ते पुराने शीशम और नीम के पेड़ों को अपने आलिंगन में ले लिया। शुक्ला कहते हैं, "स्थानीय जनता की नाराजगी देखते हुए, योजना तब एक साल के लिए स्थगित कर दी गई लेकिन अब इस पर फिर से काम शुरू हो गया है।"

मेरठ के बुद्धिजीवी हरि जोशी इस नवीनतम सड़क चौड़ीकरण परियोजना से भयभीत हैं। कहते हैं- "कांवड़ियों को इतना महत्व क्यों दिया जाना चाहिए? धर्म विशुद्ध रूप से निजी मामला है, इसे उसी तरह देखना चाहिए। राजमार्गों और दिल्ली-मेरठ रीजनल रैपिड ट्रांजिट सिस्टम (आरआरटीएस) की राह आसान करने के लिए लाखों प्राचीन पेड़ पहले ही कट चुके हैं। आरआरटीएस में हजारों लोग हर सुबह काम के लिए राजधानी आएंगे और फिर हर शाम लौटेंगे। जलवायु परिवर्तन के इस दौर में वैज्ञानिक बार-बार अत्यधिक यात्राएं रोकने की चेतावनी दे रहे हैं लेकिन हमारी सरकार ठीक इसके विपरीत काम कर रही है।" एक अन्य पर्यावरणविद आश्चर्य जताते हैं कि आखिर कांवड़ियों को इतना महत्व दिया क्यों जा रहा है: "ये तो मुख्य रूप से अराजक लोगों का झुंड हैं।" वह जोर देकर कहते हैं कि "सिंचाई और वन विभाग राज्य सरकार को बताने में विफल रहे हैं कि ऊपरी गंगा नहर उत्तराखंड और यूपी- दोनों के लिए कृषि समृद्धि का कितना जरूरी स्रोत है। अतीत गवाह है कि कांवड़िये किस तरह बेखौफ होकर नहर में कचरा और प्लास्टिक की बोतलें फेंकते हैं जिससे पानी गंदा हो जाता है और पूरी क्षमता से चलने पर लगभग 33 मेगावाट उत्पादन करने में सक्षम छोटे जलविद्युत संयंत्रों की कार्यक्षमता प्रभावित होती है।"

पर्यावरणविद् रेनू पॉल बताती हैं कि कांवड़ यात्रा सिर्फ 15 दिन तक चलती है जबकि ऊपरी गंगा नहर ने पिछले 150 वर्षों में अपना स्वयं का पारिस्थितिकी तंत्र विकसित किया है: "यह हरा-भरा और अब तक एकांत स्थान इतनी बड़ी संख्या में लोगों के आने से खतरे में है। एक बार सड़क का विस्तार हो जाने के बाद यहां नियमित यातायात संचालन होने लगेगा और यह नुकसानदेह होगा।" पॉल कहती हैं, "यह बहुत खूबसूरत जगह है। वहां चित्र पोस्टकार्ड जैसी पनचक्कियां, खूबसूरत द्वार, प्राचीन पेड़ों से घिरे ऊंचे प्लेटफार्मों पर बने पुराने विश्राम गृह हैं। ये सब चला जाएगा। यह अहसास ही कितना भयानक है। कितना बड़ा नुकसान है।"

चौंकाने वाली बात तो यह है कि वन विभाग चुपचाप राज्य सरकार की हर मांग मान कैसे लेता है। इस परियोजना के नोडल अधिकारी पीडब्ल्यूडी के कार्यकारी अभियंता संजय प्रताप सिंह ने बताया कि "वन विभाग की मदद से पेड़ों की कटाई की शुरूआत पहले मेरठ से होगी।" वन विभाग के एक अन्य अधिकारी कार्रवाई को उचित ठहराते हुए कहते हैं कि इसकी भरपाई के लिए ललितपुर जिले में प्रतिपूरक वनीकरण किया जाएगा। वैसे, यह गाजियाबाद से 550 किलोमीटर दूर है।गाजियाबाद के पर्यावरणविद् और वकील आकाश वशिष्ठ ललितपुर में प्रतिपूरक वनीकरण के तर्क पर सवाल उठाते हैं कि गाजियाबाद और उसके आस-पास के इलाके तो पहले से ही भयानक प्रदूषण और पानी की कमी से पीड़ित हैं। ऐसे में जब "ऊपरी गंगा नहर के किनारे के पूरी तरह से परिपक्व हो चुके पेड़ काटे जाएंगे तो स्थानीय जैव विविधता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा और वन्यजीव भी विस्थापित होंगे।"

नेशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल (एनजीटी) ने फैसले का स्वतः संज्ञान लेकर तीन प्रभावित जिलों के जिलाधिकारियों और यूपी वन विभाग से विस्तृत प्रतिक्रिया मांगी। वन विभाग का कहना था कि जबकि 222.98 हेक्टेयर संरक्षित वन भूमि काटी जा रही है, प्रस्तावित प्रतिपूरक पुनर्वनीकरण ललितपुर, मिर्जापुर और सोनभद्र जिलों की गैर-वन भूमि में होना तय हुआ है जो इस क्षेत्र से सैकड़ों मील की दूरी पर हैं।

परियोजना पर तत्काल रोक लगाने के बजाय एनजीटी ने 20 मई को अपनी बैठक के दौरान महज यह जानना चाहा कि यहां किस तरह की सड़क प्रस्तावित है: राष्ट्रीय राजमार्ग, राज्य राजमार्ग या किसी अन्य प्रकार की सड़क। एनजीटी ने इन वर्गीकरणों का आधार तैयार करने को भी कहा।

विनाश को न्योता कांवड़िये तो एक बहाना है। वनों के नष्ट होने का सीधा संबंध झरनों और नदियों के लुप्त होने से है। इनके सूखने से होने वाले नुकसान की भरपाई असंभव होगी लेकिन लगता नहीं कि सरकार को इसकी जरा भी चिंता है।

यूपी सरकार के लिए 15 दिनी कांवड़ यात्रा इतनी महत्वपूर्ण है कि जिस राह कांवड़िये गुजरते हैं, उनके लिए गंगा नहर किनारे की सड़क चौड़ी करने, इसके लिए लाखों हरे-भरे पेड़ काटने की तैयारी है। इसकी भरपाई के लिए ललितपुर जिले में प्रतिपूरक वनीकरण किया जाएगा जो गाजियाबाद से 550 किलोमीटर दूर है। यह पर्यावरण को कैसी चोट देगी, अंदाज लगाया जा सकता है

इस पूरी क्रिया में बरती जा रही दंतहीनता किसी को भी 'लाल निशान' दिखने के लिए पर्याप्त है। पर्यावरण मंत्रालय, वन विभाग और एनजीटी जैसी संस्थाएं किस काम की? वे हमारे पर्यावरण और जल संसाधनों की रक्षा के बजाय उन्हें नष्ट करने पर ही आमादा हैं!

वैसे भी, हमारे शहर विशाल शहरी विस्तार का रूप लेते गए हैं जहां बहुमंजिला परिसरों की जगह बनाने के लिए पेड़ों का आवरण हटा दिया गया है और जो वायु का प्राकृतिक प्रवाह अवरुद्ध करते हैं। सीमेंट निर्मित राजमार्ग और डामर पार्किंग स्थल, एयर कंडीशनर और गर्म हवा उगलने वाली कारें- ये सभी 'हीट आइलैंड प्रभाव' बढ़ाते हैं जो शहरी तापमान 15 डिग्री सेल्सियस तक बढ़ा सकते हैं।

यही वह मुख्य कारण है कि उत्तर भारत के शहरों में सर्वकालिक उच्च तापमान दर्ज किया जा रहा है। पेड़, यानी हरियाली शहरी गर्मी कम करने के सबसे किफायती तरीकों में से एक हैं। वे छाया देते हैं। उनकी पत्तियों से वाष्पित पानी दिन के सबसे गर्म हिस्सों में भी आसपास के इलाकों को कुछ डिग्री तक ठंडा कर सकता है। उनकी पत्तियां स्थानीय वायु प्रदूषण अवशोषित और फिल्टर करती हैं। ये बात हर स्कूली बच्चा जानता है।

लेकिन फिर भी हमारे पास एक ऐसी सरकार है जो जानबूझकर इस सब की अनदेखी कर रही है। सच से इनकार कर रही है। 2009 और 2023 के बीच भारत ने तीन लाख हेक्टेयर वन भूमि गैर-वन उद्देश्यों के लिए स्थानांतरित की है, यह अच्छी तरह से जानते हुए भी कि प्रतिपूरक वनीकरण काम नहीं करता है। अकेले 2020-21 में बुनियादी ढांचा परियोजनाओं के लिए लगभग 30 लाख पेड़ काटे गए। डेनिश प्रकृति स्थिरता अध्ययन ने हाल ही में पुष्टि की है कि भारत ने छह मिलियन पूर्ण विकसित पेड़ खो दिए हैं।

हमारे सत्तानशीनों की विकास कल्पनाएं पूरा करने के लिए अब उत्तर प्रदेश में बची-खुची चीजें भी निपटाई जा रही हैं। यह ऐसे समय में हो रहा है जब दिल्ली को देहरादून से जोड़ने वाले कई एक्सप्रेस-वे पहले से मौजूद हैं। कांवड़िये तो एक बहाना हैं। अधिकांश पर्यावरणविदों का मानना है कि बुनियादी ढांचा परियोजनाएं एक के बाद एक शुरू की जा रही हैं क्योंकि इससे पैसा खूब आता है। वनों के नष्ट होने का सीधा संबंध हमारे झरनों और नदियों के लुप्त होने से है। ऊपरी गंगा नहर एक समृद्ध कृषि क्षेत्र को पानी प्रदान करती है। अगर आने वाले वर्षों में यह पूरी तरह से सूख गई, तो ऐसी भयानक क्षति होगी जिसकी भरपायी असंभव है। ■

जो दिखता है, उससे कहीं अलग है असली तस्वीर

राजद को 22.14 फीसद वोट मिले जो भाजपा और जद(यू)- दोनों से ज्यादा है लेकिन उसके हिस्से केवल चार सीटें आईं

सुरूर अहमद

ऊपर से देखने पर बिहार लोकसभा के नतीजे एकतरफा नजर आते हैं- भाजपा और नीतीश कुमार की जद(यू)- दोनों को 12-12 सीटें मिलीं जबकि राज्य में 'इंडिया' ब्लॉक का नेतृत्व करने वाले तेजस्वी यादव की राष्ट्रीय जनता दल (राजद) को केवल चार सीटें मिलीं। वैसे, कांग्रेस को तीन सीटों पर जीत मिली जबकि 'इंडिया' ब्लॉक का हिस्सा भाकपा (माले) ने भी आरा और काराकाट सीटें जीतकर अपने प्रभाव वाले इलाकों में पकड़ मजबूत की है। लेकिन जीती गई सीटें आखिर लोगों के मतदान के बारे में कितनी सटीक तस्वीर पेश करती हैं?

भाजपा ने बिहार में 12 सीटें जीतीं और उसे 20.52 फीसद वोट मिले जबकि 12 ही सीटें पाने वाले जद(यू) को 18.52 फीसद वोट मिले। लोजपा (रामविलास) के चिराग पासवान को केवल 6.47 फीसद वोट मिले जबकि उसने पांच सीटें जीतीं! तेजस्वी के राजद को 22.14 फीसद वोट मिले जो भाजपा और जद(यू)- दोनों से ज्यादा है लेकिन उसके हिस्से केवल चार सीटें आईं जबकि राजद के वोट शेटर में 2019 की तुलना में 7 प्रतिशत प्वाइंट की वृद्धि हुई और भाजपा नीचे आई। 2019 में भाजपा को 23.57 प्रतिशत वोट मिले थे।

कांग्रेस ने भी 2019 में एक सीट की तुलना में इस बार तीन सीटें जीतीं। उसने किशनगंज, कटिहार और सासाराम सीटों पर जीत दर्ज की और उसके हिस्से 9.2 फीसद वोट आए। पिछले साल हुए जातीय सर्वेक्षण हिसाब से, 2024 में आधे विजेता ओबीसी (अन्य पिछड़ा वर्ग) और ईबीसी (अत्यंत पिछड़ा वर्ग) समुदायों से हैं जो राज्य की आबादी का 63 प्रतिशत हैं। बिहार में जाति स्पष्ट रूप से सबसे बड़ा कारक है। उच्च जातियों के 12 विजेताओं में से छह राजपूत और तीन भूमिहार हैं।

दलित कारक और लोजपा

लोक जनशक्ति पार्टी (लोजपा) के सभी पांच उम्मीदवारों का जीतना बड़ा आश्चर्यजनक है। लोजपा की स्थापना (दिवंगत) रामविलास पासवान ने की थी और 28 नवंबर, 2000 को लोजपा दो गुटों में विभाजित हो गई। एक का नेतृत्व उनकी दूसरी पत्नी से उनके बेटे चिराग ने किया और दूसरे का उनके भाई ने। हालांकि दलितों ने इस पूर्वानुमान को झुठला दिया कि उनके वोट बंट जाएंगे और चिराग के पक्ष में सभी एकजुट हो गए। चिराग ने 1.70 लाख वोटों के अंतर से जीत हासिल की। पूर्व मुख्यमंत्री जीतन राम मांझी के नेतृत्व वाले एनडीए के दूसरे दलित घटक दल हिन्दुस्तानी आवाम मोर्चा (हम) ने भी एक सीट पर जीत दर्ज की। गया सुरक्षित सीट से जीतकर जीतन राम नेता मांझी अब केन्द्रीय मंत्रिमंडल में शामिल हो गए हैं।

झुक जाना फिर हट जाना नीतीश कुमार जिन चीजों के बारे में जाने जाने लगे हैं उनमें उनकी एक अदा यह भी है। तभी लोगों को यह लग रहा है कि कहा नहीं जा सकता, आगे वह क्या करेंगे।

यह बात सब जानते हैं कि नीतीश कुमार को यकीन था कि 2020 के विधानसभा चुनाव में स्वतंत्र रूप से चुनाव लड़ने वाले चिराग पासवान ने जद(यू) की संभावनाओं को नुकसान पहुंचाने के लिए ही उम्मीदवार उतारे थे और इसी का नतीजा था कि जद(यू) आखिरकार खिसककर राजद और भाजपा के नीचे चली गई। इसलिए चुनाव के दौरान ऐसी अटकलें थीं कि बड़ी संख्या में जनता दल(यू) के कार्यकर्ता लोजपा उम्मीदवारों के खिलाफ काम कर रहे हैं क्योंकि वे चिराग पासवान से हिसाब चुकता करना चाहते हैं। लेकिन नतीजों ने इस बात की पुष्टि की है कि इन पार्टियों के बीच शत्रुता से दोनों ही पार्टियों को कोई नुकसान नहीं हुआ और दोनों ही दलों ने अच्छा प्रदर्शन किया।

दलित ऐक्टिविस्ट और खगौल (पटना) के जगत नारायण लाल कॉलेज में अर्थशास्त्र के प्रोफेसर शशिकांत पासवान कहते हैं, 'बिहार में दलितों की बड़ी आबादी को न तो संविधान के बारे में कुछ पता है और न ही आरक्षण के बारे में। उन्हें आप एक ही बात कहते सुनेंगे कि मोदी ने उन्हें पांच किलो अनाज दिया। इसलिए उत्तर प्रदेश के उलट बिहार में संविधान चुनावी मुद्दा नहीं बन सका।'

लोकतांत्रिक जन पहल के संयोजक सत्य नारायण मदन कहते हैं, 'उत्तर प्रदेश में दलितों की स्थिति कुछ बेहतर है और उन्होंने बदलाव को देखा है। कांशी राम के कारण उनमें जागरूकता आई। लेकिन बिहार में किसी दलित नेता ने बड़ा बदलाव लाने के लिए कोई आंदोलन नहीं चलाया।' मदन का कहना है कि बिहार में दुसाद और पासवान ने जमीन मालिक ऊंची जाति वालों के लिए सुरक्षा गार्ड की तरह काम किया जिसके कारण उनका संपर्क ऊंची जाति वालों से ज्यादा रहा। उसी तरह उत्तर प्रदेश के जाटवों की तुलना में बिहार के रविदास समाज की सामाजिक-आर्थिक स्थिति कहीं बदतर रही।

आंतरिक मतभेद

आम धारणा है कि इंडिया ब्लॉक को आंतरिक मतभेदों के कारण कई सीटों पर मामूली अंतर से हार का मुंह देखना पड़ा। यह स्थिति न सिर्फ पूर्णिया की है जहां पप्पू यादव ने निर्दलीय के तौर पर करीब 23 हजार वोटों के अंतर से जीत दर्ज की या सिवान की जहां हिना साहब जद(यू) की विजय लक्ष्मी कुशवाहा से हार गईं। अररिया में जहां मुस्लिमों की आबादी 42 फीसद है, भाजपा के मौजूदा सांसद प्रदीप कुमार सिंह ने तसलीमुद्दीन के बेटे राजद के शाहनवाज आलम को 20,094 वोटों से हरा दिया। इसकी वजह यह रही कि पांच अन्य मुस्लिम उम्मीदवारों के हिस्से में 41,000 वोट आए। सारण में रोहिणी आचार्य भी इसलिए भाजपा के राजीव प्रताप रूडी से 13,661 वोटों से हार गईं क्योंकि यादव और मुस्लिम उम्मीदवारों ने 35,000 वोट काट लिए। लालू यादव की दूसरी बेटी रोहिणी की हार का अंतर राज्य में सबसे कम रहा। कई पर्यवेक्षकों का दावा है कि दलित वोट अंतिम समय तक ऊहापोह में रहा कि राजद को वोट दे या फिर जद(यू) को लेकिन अंततः उसने नीतीश कुमार को समर्थन देने का फैसला किया। नीतीश को मुख्यमंत्री के तौर पर उनके पहले कार्यकाल (2005-2010) के लिए हुए चुनाव में दलितों का भारी समर्थन मिला था। ■

सांप्रदायिक खोल में चलाया जाता वर्गीय एजेंडा

हिन्दुत्ववादी तत्वों ने विरासत कर के प्रस्ताव के साथ जैसा सलूक किया है, उससे अंदाजा लग जाता है कि पूंजीपति इतने निश्चिंत क्यों हैं?

प्रभात पटनायक

विरासत कर के मुद्दे पर भाजपा का रुख इसका एक स्पष्ट उदाहरण है कि फासीवादी संगठन किस तरह से काम करते हैं। यह तथ्य है कि नव-उदारवादी दौर में आय तथा संपदा की असमानता में भारी बढ़ोतरी हुई है। यह अंतरराष्ट्रीय परिघटना है जिस पर उच्च पूंजीवादी हलकों में बहस होती रही है। विश्व आर्थिक फोरम में इसकी जरूरत का जिक्र किया जाता रहा है कि इस असमानता को घटाने के लिए कुछ न कुछ प्रतिसंतुलनकारी कदम उठाए जाने की जरूरत है। दूसरे शब्दों में, दुनिया के सबसे धनवान तक इसे पहचान रहे हैं कि संपदा तथा आय की असमानता में बेरोक-टोक बढ़ोतरी से पूंजीवाद के भविष्य के लिए खतरा पैदा हो रहा है। इसी को पहचान कर कुछ समय पहले अनेक अमेरिकी अरबपतियों ने बयान जारी कर सुझाव दिया था कि उन पर तथा अन्य धनवानों पर ज्यादा कर लगाया जाना चाहिए।

लेकिन भारत के धनवानों में और कम-से-कम वर्तमान दौर के धनवानों में तो जरूर ही इस तरह की दूरदर्शिता का घोर अभाव है। उन्हें तो यह लगता है कि उनके लिए तो एक फासीवादी संगठन को समर्थन देना ही काफी है जो धार्मिक-सांप्रदायिक तुरुप का इस्तेमाल कर के चुनाव जीत सकता है और फिर उनके बोलबाले के लिए किसी भी चुनौती को कुचलने के लिए घोर तानाशाहीपूर्ण कदमों का सहारा ले सकता है। संपदा और आय में उनके हिस्से का अनंतकाल तक बढ़ते रहना सुनिश्चित करने के लिए इतना ही काफी है। एक वक्त था जब भारतीय पूंजीपतियों के बीच जीडी बिड़ला जैसे नेतृत्वकारी तत्व देश के पूंजीपतियों को इसकी सलाह दिया करते थे कि अपनी संपदा का दिखावा करने से बचें। वह ऐसा दौर था जब पूंजीपति वर्ग को इसका डर हुआ करता था कि जनता विरोध में उठ खड़ी होगी। आज पूंजीपति वर्ग के नेताओं को जनता की नाराजगी का डर नहीं रह गया है। उन्हें यकीन है कि हिन्दुत्ववादी तत्वों के साथ उनका गठजोड़ संपदा में उनके अनुचित रूप से बड़े हिस्से के चलते पैदा होने वाली उनके वर्चस्व के लिए किसी भी चुनौती को विफल कर देता। हिन्दुत्ववादी तत्वों ने विरासत कर के प्रस्ताव के साथ जिस तरह का सलूक किया है, उससे इसका कुछ अंदाजा लग जाता है कि पूंजीपति इतने निश्चिंत क्यों हैं?

संपदा की असमानताओं पर हमला करने का सबसे स्वतः स्पष्ट तरीका तो यही है कि एक प्रगतिशील संपदा कर लगाकर उससे मिलने वाले संसाधनों का उपयोग गरीबों के लिए हितकारी खर्चों के लिए किया जाए और यह कुछ सार्वभौम आर्थिक अधिकार स्थापित करने के जरिये किया जाए।

अधिकांश विकसित देशों में मृत्यु शुल्कों के रूप में तगड़ा विरासत कर लगाया जाता है। जापान में विरासत कर 55 प्रतिशत तक जाता है जबकि भारत में कोई विरासत कर है ही नहीं।

दरअसल, एक अनिवासी तकनीकी-प्रेमी कांग्रेसी सैम पित्रोदा ने पिछले दिनों विरासत कर लगाने का विचार पेश किया था और भाजपा का नेतृत्व उस पर ऐसे टूट कर पड़ा था जैसे पूरी की पूरी छत आ गिरी हो। जाहिर है कि भारत के अति-धनिक इस विचार से ही डर गए और अति-धनिकों की हिमायती होने के नाते भाजपा को तो इस विचार पर ही हमला करने के जरिये उनके बचाव में आगे आना ही था। लेकिन उसने उनका बचाव जिन अनेक आधारों पर किए जाने की अपेक्षा थी, उनमें से किसी पर नहीं किया। उसने इस विचार पर पूरी तरह से फर्जी और घोर सांप्रदायिक-फासीवादी दलील के आधार पर हमला बोल दिया कि इस तरह का कर लगाने का मतलब होगा हिन्दुओं से धन छीनकर मुसलमानों को दे देना!

जाहिर है कि विरासत कर कोई धर्म के आधार पर नहीं लगाया जाता है। यह कर तो विरासत में मिलने वाली संपदा के परिमाण के आधार पर लगाया जाता है। भाजपा का यह दावा हैरान कर देने वाला है कि यह कर धार्मिक आधार पर लगाया जाएगा। उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री आदित्यनाथ ने पिछले ही दिनों दावा किया कि विरासत कर औरंगजेब द्वारा हिन्दुओं पर लगाए गए जजिया कर के समान होगा।

> विरासत कर के खिलाफ अभियान एक खास अल्पसंख्यक समुदाय के खिलाफ नफरत बढ़ाता है। यह विपक्षी राजनीतिक पार्टियों को बदनाम करता है। यह अति-धनिकों की हिफाजत करता है जो उसके प्रमुख संरक्षक हैं। यह कारनामा शरारतपूर्ण झूठ का सहारा लेकर किया गया है जिस तरह के झूठ का सांप्रदायिक-फासीवादी संगठन आदतन सहारा लेते हैं

न तो नरेन्द्र मोदी को और न ही आदित्यनाथ को इस बिना पर माफ किया जा सकता है कि उन्हें पता नहीं होगा कि विरासत कर होता क्या है? वे जान-बूझकर झूठ फैलाने के लिए ही इसका राग अलापना जारी रखे हुए हैं कि संपदा कर इसलिए लगाया जा रहा है ताकि मुसलमानों को फायदा पहुंचाया जा सके। यह स्पष्ट रूप से दिखाता है कि किस तरह अति-धनिकों को ऐसे झूठे धार्मिक आख्यान के जरिये बचाया जा रहा है जो इसके साथ ही साथ धार्मिक अल्पसंख्यक समुदाय के खिलाफ नफरत फैलाता है और कथित रूप से अल्पसंख्यकों का तुष्टीकरण करने के लिए एक विपक्षी राजनीतिक पार्टी के खिलाफ नफरत फैलाता है।

इसलिए भाजपा के लिए तो विरासत कर के खिलाफ अभियान एक तीर से तीन शिकार करता है। यह एक खास अल्पसंख्यक समुदाय के खिलाफ नफरत और बढ़ाता है। विपक्षी राजनीतिक पार्टियों को बदनाम करता है और विरासत कर के विचार को ध्वस्त कर देता है। इस तरह अति-धनिकों की हिफाजत करता है जो उसके प्रमुख संरक्षक हैं। यह कारनामा शरारतपूर्ण झूठ का सहारा लेकर किया गया है जिस तरह के झूठ का सांप्रदायिक-फासीवादी संगठन आदतन सहारा लिया करते हैं।

इससे एक और सवाल उठता है। कोई भी जनतांत्रिक व्यवस्था इस पूर्वधारणा पर टिकी होती है कि लोग सार्वजनिक दायरे में आए सभी मुद्दों को समझने में और उनमें से हरेक पर एक जानकारीपूर्ण तथा समझदारीपूर्ण रुख अपनाने में समर्थ होंगे।

जाहिर है कि एक शोषणकारी समाज में यह और भी महत्वपूर्ण हो जाता है कि सभी मुद्दों पर जनता के बीच बहस हो और उनके सामने विभिन्न पक्षों का खुलासा किया जाए। सिर्फ वर्गांतरित बुद्धिजीवी ही नहीं बल्कि अनेक पूंजीवादी लेखक भी मुद्दों को जनता के सामने स्पष्ट करने के लिए और इस तरह जनतंत्र को अमल में लाने के लिए शिक्षित तथा आत्मचेतस बुद्धिजीवी तबके की भूमिका को पहचानते हैं।

मिसाल के तौर पर, पूंजीवादी अर्थशास्त्री जॉन मेनार्ड केन्स ने जनतंत्र के परिचालन के लिए शिक्षित पूंजीपति वर्ग के महत्व पर जोर दिया था। केन्स की संकल्पना के अनुसार, शिक्षित पूंजीपति वर्ग का काम लोगों के सामने ठीक यह स्पष्ट करना ही होता कि विरासत कर धर्म के आधार पर लगाया जाने वाला कर नहीं होता है। इसलिए अपने सोचे-समझे झूठे आख्यानों के साथ फासीवादी तत्वों का राजनीतिक व्यवस्था में ऊपर चढ़ना इस संकल्पना के अनुसार शिक्षित पूंजीपति वर्ग के हाशिये पर धकेले जाने का या उसके अपने दायित्व को त्याग देने का ही सूचक है।

केन्स की अवधारणा के संबंध में हमारी चाहे जो भी असहमतियां हों, इस व्यवहार में दिखाई देने वाली परिघटना से इनकार नहीं किया जा सकता है कि शिक्षित पूंजीपति वर्ग कमजोर पड़ गया है या गायब ही हो गया है। यह तथ्य कि भाजपा के शीर्ष नेता विरासत कर को धर्म-आधारित कर के रूप में पेश कर के निकल जाते हैं और मीडिया में इस पर कोई शोर तक नहीं होता है, शिक्षित पूंजीपति वर्ग के इस विलुप्त होने का ही संकेतक है। वास्तव में तथाकथित गोदी मीडिया इस विलोपन का ही एक लक्षण है।

सवाल यह है कि यह क्यों हुआ? शिक्षित पूंजीपति वर्ग आखिरकार पूंजीपति वर्ग का ही एक हिस्सा है। केन्स ने उससे जिस भूमिका की अपेक्षा की थी, उस भूमिका को वह तभी अदा कर सकता है जब अपने जेहन में वह इस संबंध में स्पष्ट होगा कि एक जनतांत्रिक राजनीतिक व्यवस्था वाले पूंजीवादी समाज को किस दिशा में जाना चाहिए। एक जनतांत्रिक स्तंभ के रूप में उसका कमजोर होना और इसलिए फासीवादी परियोजना के साथ उसका राजीनामा इसी का सूचक है कि नव-उदार पूंजीवाद का अंधी गली में फंस जाना कितना गंभीर। केन्स नव-उदार पूंजीवाद के ऐसी अंधी गली में फंस जाने की कल्पना भी नहीं कर सकते थे और यह अंधी गली में फंस जाना बड़े वर्गीय संघर्षों का पूर्व-संकेत है, जिनसे केन्स पूंजीवाद को बचाना चाहते थे। ■

प्रभात पटनायक प्रख्यात अर्थशास्त्री हैं। साभारः hindi.newsclick.in

ADVERTISEMENT RATE CARD

w.e.f. 1 January 2024

NATIONAL HERALD ON SUNDAY संडे नवजीवन

The AJL Group has two weekly newspapers and three website portals in English, Hindi and Urdu

www.nationalheraldindia.com | www.navjivanindia.com | www.qaumiawaz.com

Commercial Display (w.e.f 1st Jan 2024)

Category of Advertisements (C/BW)	National Herald on Sunday (National Edition)	(Mumbai)	Sunday Navjivan (National Edition)
Full Page (1650 sq.cm)	Rs 10 Lakh	Rs 8 Lakh	Rs 10 Lakh
Half Page (800 sq. cm)	Rs 6 Lakh	Rs 5 Lakh	Rs 6 Lakh
Quarter Page (400 sq. cm)	Rs 4 Lakh	Rs 3 Lakh	Rs 4 Lakh
< Quarter Page (400 sq. cm)	Rs 1515 per sq. cm		

PAGE PREMIUM	Display Ads BW/Color	Political Ads BW/Color
Front page	100% Surcharge	200% Surcharge
page (3 & back)	25% Surcharge	100% Surcharge
Specified page	50% Surcharge	50% Surcharge

*Advance payment is needed for all political advertisements.

Classified for festival greetings and anniversary
Full page @ Rs 1,00,000 | Half Page @ 60,000
< 240 sq. cm @ Rs 175 per sq. cm

State Govt Advertisements/ C/BW
@ Rs 525 per sq. cm

The Associated Journals Limited
Herald House, 5A, Bahadur Shah Zafar Marg,
New Delhi 110002
Phone: 011-47636300 - 313
Whatsapp No: 9650400932
Email: advt@nationalheraldindia.com

Online Remittance/Bank Beneficiary Details:
Name: **Associated Journals Limited**
Bank Name: **Canara Bank**
Branch Name: **I P Estate, New Delhi-110002**
C/A No.: **90171010003955;** IFSC Code: **CNRB0019017**
GST No.: **27AAECA1180A1ZB ;** PAN No.: **AAECA1180A**

NOTE: Cheque / DD should be drawn in favor of "Associated Journals Limited" and sent to Herald House, 5-A Bahadur Shah Zafar Marg, New Delhi -110002.

General Terms and Conditions

w.e.f. 1 January 2024

..... National Herald on Sunday (Delhi & Mumbai) and Sunday Navjivan .....

1. All advertisements are published in Edition(s) of the paper and charges are payable strictly in advance of publication by Bank Draft or Bank Transfer (RTGS) and /or cheques only except in the case of advertising agencies accredited to INS.

2. Advertisements are accepted for publication on top of advertisements positions on an additional charge of 25%. No advertisement is however published on top of news-matter.Top of column position cannot be guaranteed even on payment of additional charge of 25%.

3. Extra charges for top of column position are calculated on the total amount payable inclusive of amount payable for specified pages.

4. Every reasonable effort is made to publish an advertisement on the date(s) specified by an advertiser. The Management however reserves the right to vary the date or the scheduled date(s) of publication, with or without notice to the advertiser, owing to the exigencies of availability of spaces.

5. The management reserves the right to refuse, suspend or stop, in its discretion, publication of any advertisement without assigning any reasons.

6. While every endeavour will be made by the Management to avoid publication of competitive advertisements in close proximity to one another, no guarantee can be given in this respect nor will the claims be entertained for free insertions in the event of announcements of rival product appearing on the same page.

7. The placing of an order by an Advertiser/Advertising Agency constitutes a warranty by the Advertiser/Advertising Agency to the Associate Joumals Limited Management that the Advertiser/ Advertising Agency has secured the necessary authority and permission in respect of the use in the advertisement or advertisements of pictorial representation of (or purporting to be of) living persons and all references to words attributing to living persons.

8. The advertisements will be charged at the rate applicable on the day of publication of the advertisement irrespective of the date of booking, date of release order and whether the advertisement is part of any package/scheme.

9. Standing instructions are accepted over Whatsapp or email. However verbal instructions must be clear and specific. Quoting reference of the previous release order and/or new scheduled dates of insertions in respect of which the instructions are given. These instructions should be given afresh either through Whatsapp/email and/or Landline phone.

10 Booking of space for premium positions in all The Associated Journals Limited publications will be confirmed only upon receipt of original releaseorder. Fax/Scanned copies, Emails will be entertained for the same.

11. "Reader" advertisements are accepted but will be distinguished from 'news matter' by a rule around the advertisement matter and expression 'advt' will be added at bottom.

12. Solus/Semi Solus positions cannot be guaranteed on the front page.

13. Cancellation charges @20% of the total cost of the front/Full page advertisement shall be levied if a cancellation of booking is made two days before the scheduled date of publication. Cancellation charges @35% of the total cost of the full front-page advertisement shall be levied if the cancellation of a booking of front/full page advertisement is made one day before the scheduled date of the publication.

14. In the event of printing mistake, omission or non-publication of advertisement, the advertising agencies shall have to furnish the instructionson behalf of their client for republication. In the event of a dispute the liability of Management shall be restricted to the amount received against sale of spaces for the advertisement received. All disputes /claims regarding advertisement /complaints must be made within a period of one month of publication date after which no claim will be entertained.

15. The Management shall not be responsible for any loss or damage caused by an error or inaccuracy in the printing of/or omission in inserting advertisements.

16. In case of dispute, the agency shall not be entitled to invoke any condition suggestive of existence of an arbitration agreement unless specifically agreed to by the Management.

17. No deduction is allowed from bills raised against publication of advertisement(s) on account of any defective insertion(s). Any claims in these respects, if admitted, will be met by publishing a corrigendum/ free insertion or the like, depending upon the merits of the claim vis-a-vis the error in publishing the advertisement(s) or other materials. Claims for refund or for compensation, if admitted, shall be restricted to the charges for advertisement received by Management. The decision of the management shall be final in this regard.

18. The advertisements released by Government/Semi Government/ Undertakings/Autonomous body are published in classified display column only at commercial rates irrespective of the number of words.

19. The advertising agencies releasing an advertisement on behalf of its client shall be deemed to have undertaken to keep the management indemnified in respect of costs, damages or other charges incurred by the Management as a result of any legal action or threatened legal action arising from and in relation to publication of any advertisement published in accordance with the release order and the copy of instructions supplied by the agency.

20. The agency shall bring to the notice of its clients these General Terms and it shall not be open to any of its clients to plead/claim or aver ignorance of these General Terms which apply to every transaction of sale of space in particular issue(s) of any of publications of The Associated Joumals Limited.

21. No agency commission is payable on the on the classified advertisements chargeable at DAVP rates.

22. Fraction of centimetre in excess of the scheduled size shall be charged as full centimetre if the advertisement exceeds the scheduled size. If the material supplied is shorter than the scheduled size, the advertisement will be charged for the size scheduled and not for theactual space occupied or consumed by the advertisement on the basis of the short size material so supplied.

23. The Management shall not be bound by notice of stoporders, cancellations, preponements/postponements or alterations/deletions/ additions in the material(s) of advertisement(s) booked for publication in special or specified position if received less than one week prior to dates of insertion. For ordinary advertisement, the stoppage or not of cancellation must reach at least four days before the scheduled date of publication of advertisement.

24. The Management reserves the rights to revise the rates and terms and conditions without any notice.

25. Every Advertiser/Advertising Agency acknowledges having read and accepted these Terms and Conditions.

26. Courts only in New Delhi, shall have the jurisdiction to entertain and decide all disputes and claims, arising out of publication of any advertisement in the Associate Journals limited publications.

27. The Management shall be at liberty to refuse to carry advertisements/ adjust amounts paid for subsequent ads against pre-existing liabilities, even without carrying such subsequent advertisement.

28. Advertising party hereby agrees to indemnify, defend and hold harmless AJL, it's directors, officers, shareholders and agents against any and all third party claims arising out of or in connection with the content or placement of the advertisement, and to the fullest extent.

29. In no event shall AJL be liable hereunder for any indirect, incidental, special, consequential, punitive or exemplary damages or losses in connection with these terms even if advised in advance of the possibility of arising of such liability, damages or losses.

30. In no event shall AJL's aggregate liability exceed Rs. 10,000 to any advertising party.

कविताएं/ चन्द्र

ब्रह्मपुत्र

बंधु, क्या तुम्हें पता है ब्रह्मपुत्र सराय घाट के पुल तक आते-आते
कितने नाम बदलते आती है
बंधु, क्या तुम्हें पता है
अरुणाचल में जो अभी बह रही है ब्रह्मपुत्र
उसका नाम क्या है
बंधु, क्या तुम्हें पता है
चीन में, बांग्लादेश में
और तिब्बत में ब्रह्मपुत्र का नाम क्या है
बंधु, क्या तुम्हें पता है ब्रह्मपुत्र हर साल
कितनों को निर्वासिन में भेज देती है
हजीरा मजूरी के लिए।
बंधु, क्या तुम्हें पता है
ब्रह्मपुत्र की मछलियां हर साल
किस-किस देश की मछलियों से मिलने जाती हैं
और मारी जाती हैं। ■

बुलबुल

बुलबुल बता
मेरे गन्ने का पकाया हुआ गुड़ कितना मीठा है
पंडुको क्यों झराते हो झर-झर
पके हुए सरसों के डंठल
गौरैया चिरईयों
क्यों नहाती हो धूल भरे खेतों में फर-फर
बिल्लियों क्यों म्याऊं-म्याऊं पुकारती हो आधी रात
हमें देखती हुई
क्या तुम खाना मांगती हो?
बुलबुल बता
मेरे गन्ने का पकाया हुआ गुड़ कितना मीठा है
हम सबसे तुम्हारा क्या नाता है
क्या रिश्ता है
आओ, तुम मेरा प्रिय साथी बनो
हमें तुम्हारा मुद्दई कभी नहीं बनना। ■

मृत्यु नहीं

मैंने इस धरती में
लाखों लाखों
बीजों को
गाड़ा है

मैंने इस धरती में
लाखों लाखों बार
कुदालों को चलाया है
मुझे मृत्यु नहीं
मुक्ति चाहिए धरती
मुक्ति। ■

कुछ भी छूटता है तो दंश देता ही है। पुराने घर के पीछे छूटने का दंश कुछ ज्यादा ही पीड़ा देता है। शैलजा की पीड़ा भी ऐसी ही है। अत्यंत मार्मिक भी

परिवर्तन

माला कुमारी

कहानी

शैलजा का घर बिक रहा था। वही घर जहां वह वर्षों पहले देवेश के साथ परिणय-सूत्र में बंधकर आई थी।

नादान, अल्हड़ किशोरी, घर-गृहस्थी की बातों से अनजान, चंचल बाला बड़े अरमानों और सपनों को संजोए उस घर में आई थी। पति इंजीनियरिंग कॉलेज में व्याख्याता थे। उन्होंने शहर में एक पुराना मकान खरीद लिया था जहां वह शैलजा को ब्याह कर लाए थे।

गांव में उनका विशाल पैतृक घर और वृहत संयुक्त परिवार था। कुछ दिनों के लिए उन्होंने अपनी माताजी को नई बहू के साथ रहने को बुला लिया था। पति के भरपूर प्यार और सासुमां के वात्सल्यपूर्ण सान्निध्य में शैलजा के दिन सुखपूर्वक गुजरने लगे।

देवेश की अच्छी-खासी मित्र-मंडली थी। मित्रों का अक्सर घर में आना-जाना होता था। उनकी पत्नियों से हेल-मेल के बाद शैलजा ने खाना पकाने और घर-गृहस्थी के गुर सीख लिए थे। शादी के साल बीतते

ही शैलजा ने एक पुत्री और उसके दो वर्ष बाद एक पुत्र को जन्म दिया। पति के सहयोग के साथ शैलजा ने बच्चों की अच्छी परवरिश की। उस घर में बच्चों की किलकारियां, बाल सुलभ क्रीड़ाएं, उनका धीरे-धीरे बड़ा होना, संगी-साथियों के साथ खेलना-कूदना, लड़ना-झगड़ना इत्यादि शैलजा के मन के परदे पर चित्रपट की भांति आज भी दृश्यमान होते रहते हैं। बच्चे उसी घर में पले-बढ़े और स्कूल की शिक्षा पूरी कर कॉलेज में दाखिल हो गए। देवेश ने बच्चों की पढ़ाई-लिखाई में कोई कोर-कसर नहीं छोड़ी और उनके साथ स्वयं भी कड़ी मेहनत की।

आगे चलकर बेटी निमिषा डॉक्टर बनी और बेटा निखिल इंजीनियर बन गया। उसी घर से उसने अपनी बेटी और बेटे की शादी धूमधाम से रचाई और आज दोनों अपने परिवार के साथ खुश हैं। बेटा-बहू दिल्ली में इंजीनियर हैं और बेटी अमेरिका में अपने पति के साथ डॉक्टरी की प्रैक्टिस कर रही है।

शैलजा को सुखद आश्चर्य होता है कि कैसे इस घर में इतना लंबा समय गुजर गया! जिस घर में वह नव परिणीता दुल्हन बनकर आई थी, आज वहीं विवाह की पचासवीं वर्षगांठ मना रही है।

इस घर में उसने एक भरपूर जिंदगी जी है। बच्चों के लालन-पालन, उनकी शिक्षा-दीक्षा और घर की अभिवृद्धि हेतु उसने कठोर संघर्ष और परिश्रम किया है। लक्ष्मी और सरस्वती- दोनों वास करती हैं इस घर में।

कल और आज में कितना भारी परिवर्तन आ गया है! आज एक छोटा-सा घर महल में तब्दील हो गया है। घर के सामने रंग-बिरंगे फूलों से सजी वाटिका और पीछे एक सुंदर-सा किचेन गार्डेन है जिसमें आम, कटहल और सहजन के वृक्ष भी हैं। वे मौसम के अनुरूप खूब फलते-फूलते हैं। घर के फाटक के दोनों ओर दो-दो नारियल के पेड़ हैं और वे इतने फलते हैं कि शैलजा छठ पर्व में व्रतियों को खूब नारियल बांटती है।

इस घर को उसने अपने हाथों से संवारा है। इसका कोना-कोना उसके श्रम-स्वेद से सिंचित है। देवेश ज्यादातर बाहर का काम, कॉलेज में अध्यापन और ट्यूशन में व्यस्त रहते थे, पर उसने अपनी मेहनत और दक्षता से इस घर को भव्य और पावन बना दिया है। उसने घर के अहाते में एक छोटा-सा मंदिर और तुलसी चौरा भी बनवाया है।

वह अपने को बहुत भाग्यशाली मानती थी कि उसका घर गंगा के तीर पर स्थित था। उसके घर के आगे कुछ ही दूर पर, चढ़ाई वाली सड़क के अंतिम छोर पर गंगा घाट था और उसके ठीक पहले शहर का सुविख्यात महिला कॉलेज। कॉलेज से दस-बीस कदम पहले उसका घर और घर के बगल की सड़क से सटे एक पुराना शिव मंदिर था। मंदिर, गर्ल्स कॉलेज और गंगाघाट लेन की वजह से उसके घर के मार्ग पर हमेशा गहमागहमी बनी रहती थी। उसके पति देवेश बहुत बिंदास और मस्तमौला स्वभाव के थे। तड़के ही मित्रों की पुकार सुनकर उठ जाते एवं गाय दुहवाकर शुद्ध दूध लाते, स्वयं चाय बनाकर पत्नी के साथ पीते। गप्पें हांकना, हंसी-ठिठोली करना, चाय की चुस्कियों और पान की गिलौरी के साथ मित्रों के संग वक्त बिताना- देवेश की दिनचर्या में शुमार था; किंतु उनकी सफलता का रहस्य उनकी कर्मठता और अनुशासित जीवन में निहित था।

सुबह गृहकार्य से फुर्सत न मिलने के कारण शैलजा पार्क में सखियों के साथ संध्या भ्रमण करती थी। सप्ताह में दो दिन योगाभ्यास और दो दिन संगीत अभ्यास के लिए निर्धारित था। शैलजा का ज्यादातर समय टैरेस पर बीतता था। उसकी दिन भर की सारी गतिविधियों और कार्यकलापों का केन्द्र वही स्थान था। रंगबिरंगे आधुनिक परिधानों में सजी कॉलेज जाती छात्राओं को देखना उसे बड़ा अच्छा लगता। उनका वार्तालाप, शोखी भरी हरकतें देख वह आनंदित होती।

भोर होते ही उसके घर के बगल के मंदिर में फुलडलिया लेकर जाती स्त्रियां, बच्चे-बच्चियां उसका मन मोह लेती थीं। कार्तिक पूर्णिमा, मकर संक्रांति आदि के पावन अवसर पर वहां गंगा स्नान करने वाले श्रद्धालुओं का तांता लगा रहता।

> वह घर न बेचने की गुहार लगाती रही, पर पति और बेटे ने एक न सुनी। सौदा तय हो गया। शैलजा के तन-मन में न कोई खुशी थी, न स्फूर्ति। यंत्रवत काम कर रही थी। देवेश के कहने पर घर की चाभी क्रेता के हवाले की। आंखें छलछला उठीं। लगा किसी ने उसके प्राण खींच लिए हों

ऐसे सुरम्य वातावरण को छोड़कर शैलजा का कहीं अन्यत्र जाने का दिल नहीं करता था। यद्यपि बीच-बीच में वह छुट्टियों में अपने बच्चों के पास जाती, पर शीघ्र ही उकताने लगती। घर से दूर जाकर अपनी घर-गृहस्थी, स्वतंत्र जीवन, मुहल्ले का पारिवारिक माहौल, आपसी प्रेम और अपनत्व, अपने टैरेस पर से दिखने वाले मनोरम दृश्य- सबकुछ बहुत मिस करती। विदेश का सुख और आकर्षण भी उसे बांध नहीं पाता था और वह जल्दी ही अपने बसेरे में लौट आती थी। इससे देवेश और बच्चों को काफी क्षोभ होता था।

कुछ समय से देवेश की तबीयत खराब रहने लगी थी। निखिल और निमिषा इस पर तीखी प्रतिक्रिया व्यक्त कर रहे थे। वे लोग इस घर को छोड़कर मां-पिताजी के दिल्ली शिफ्ट होने की बात करने लगे थे, पर शैलजा इसका कड़ा विरोध करती थी। अक्सर निखिल कहता- "समय के साथ सोच बदलनी चाहिए मां ! कबतक लीक पकड़कर बैठी रहोगी? छोटे शहर से निकलकर बड़े शहर में आओ। यहां क्या रखा है? न अच्छे डॉक्टर्स हैं और न किसी तरह की आधुनिक सुविधा। हमारे बच्चों को भी दादा-दादी की जरूरत है। फिर इस ढलती उम्र में तुमलोग बीमार हुए तो हमलोग नहीं आ सकेंगे। फिर कौन तुमलोगों की देखभाल करेगा? निमिषा को भी दिल्ली आने में कोई दिक्कत नहीं, पर यहां आना मुश्किल है। पिताजी ने तो अपना मन बना लिया है। फिर तुम क्यों नाहक जिद पर अड़ी हो?"

ऐसी बातें सुनकर शैलजा को अजीब- सी छटपटाहट होती। करुण स्वर में कहती- "यहां छोड़कर मेरा मन कहीं नहीं लगता बेटा। यहां मेरा व्यवस्थित जीवन है, नियमित दिनचर्या है जिसकी मुझे आदत हो गई है।"

निखिल कड़े स्वर में कहता- "कैसी बच्चों जैसी बातें करती हो मां! यहां के अस्वच्छ वातावरण, लोगों की दकियानूसी सोच से बाहर निकलो। हमारी सोसायटी में विभिन्न प्रांतों, धर्मों के उत्सव, त्योहार मनाए जाते हैं। इनमें सम्मिलित होकर तुम अपूर्व आनंद का अनुभव करोगी। नए वातावरण में नए सिरे से जीवन जीओगी, धीरे-धीरे तुम्हारा मन रम जाएगा।"

देवेश भी शैलजा को समझाते- "अब भला किसके सहारे यहां रहूं? मेरे सारे दोस्त स्वर्ग सिधार चुके हैं। पुकारने वाला कोई मित्र नहीं, सुबह उठकर अगल-बगल, आमने-सामने जिनके मुस्कुराते चेहरे देखकर दिन की शुरूआत होती थी, अब कोई न रहा। अब कोई आत्मीय रिश्तेदार भी नहीं, किसी के दर्शन भी दुर्लभ हैं, अकेलेपन की पीड़ा और अवसाद ने मुझे कुंठित कर दिया है।"

ये बातें सुनकर भी शैलजा टस से मस न हुई। घर बेचकर यहां से जाने की कल्पना-मात्र से वह कांप उठती। यह घर उसके लिए सिर्फ आश्रय-स्थल नहीं था। यह उसके अपने सपनों का संसार था। यहां उसके सपने साकार हुए थे। उसका अस्तित्व इस घर में इस कदर समाहित हो गया था जैसे पानी में रंग घुल-मिल गया हो। उसका रोम-रोम रच-बस गया था इसकी पावन मिट्टी में।

वह घर न बेचने की गुहार लगाती रही, पर पति और बेटे ने एक न सुनी। सारा सौदा तय हो गया। धीरे-धीरे सामान पैक करवाकर दिल्ली भेजे जाने लगे। शैलजा के तन-मन में न कोई खुशी थी, न स्फूर्ति। वह यंत्रवत काम कर रही थी। अपनी प्रिय वस्तुओं को चुन-चुन कर उसने अलग पैकिंग की। बसा-बसाया आशियाना उजड़ गया। उसके हाथों से सजाया हुआ गुलशन वीरान हो गया। विदाई की वेला आ गई। देवेश के कहने पर शैलजा ने घर की चाभी क्रेता के हवाले की। उसकी आंखें छलछला उठीं। लगा किसी ने उसके प्राण खींच लिए हों। वह मौन, निस्पन्द बैठी रही।

तभी देवेश ने शैलजा से कहा- "गाड़ी आ गई है, एक बार पूरे घर को देख लो, चेक कर लो, कहीं कुछ जरूरी चीज न छूट जाए।" फिर वह हाथ में बैग उठाए नीचे उतरकर गाड़ी में बैठ गए।

गाड़ी बार-बार हॉर्न बजा रही थी। देवेश चिल्ला रहे थे- "क्या हुआ शैल? अब क्या छूट गया?"

शैलजा ने मंदिर में स्थित देवी-देवताओं को प्रणाम किया और फिर तुलसी चौरा को दोनों हाथों से थामकर, हृदय से लगाकर नमन किया। आंखों में उमड़े आंसुओं को रोककर फिर वह गेट के बाहर आई और चुपचाप गाड़ी में बैठ गई। अंतिम बार उसने अपने घर की ओर दृष्टि डाली। मन-प्राण, आत्मा- सबकुछ तो यहीं छूट गया था। वह बेजान जिस्म, बुत बनी बैठी थी। शैलजा की मनःस्थिति को भांपकर देवेश भी चुप हो गए थे।

गाड़ी चल पड़ी- एक नए परिवर्तन की डगर पर। गंगाघाट, कॉलेज, शिव मंदिर, पीर बाबा की मजार, योग-संस्थान, सुरसागर संगीत केन्द्र- उसके चिर-परिचित सभी स्थान पीछे छूट गए।

शहर से आगे गाड़ी ने रफ्तार पकड़ ली और अब पक्की, चिकनी सड़क पर सरपट दौड़ने लगी।

वर्चस्व की संस्कृति के खिलाफ लड़ने वाला योद्धा

चौथीराम जी के लिए चुप्पी जीवन अस्त्र की तरह रही है। उनके चुप की अर्थ ध्वनियां मीर के इस शेर की व्यंजना से टकराती हैं- 'हमें इश्क़ में मीर चुप लग गई है / न शकुरो शिकायत न हरफे हिकायत'

सदानंद शाही

प्रो चौथीराम यादव नहीं रहे। सूचना मिली तो सहसा यकीन नहीं हुआ। थोड़ी ही देर पहले हमने सुरजीत पातर की मृत्यु पर उनकी पोस्ट देखी थी। कुछ दिन पहले वह पारिवारिक विवाह समारोह से लंबी यात्रा करके देर रात लौटे थे। अगले ही दिन मऊ में अंबेडकर जयंती के आयोजन में शिरकत करने निकल गए। वापसी में वह हिन्दी विभाग की कनिष्ठतम आचार्या प्रियंका सोनकर के घर से होते हुए लौटे थे। ऐसी सक्रियता वाले चौरासी वर्षीय युवा को देख सुनकर लगता नहीं था कि वह इतनी जल्दी चले जाएंगे। उनका अचानक इस तरह जाना उनके चाहने और मानने वालों को स्तब्ध कर गया। साथ ही सचेत भी कि काल करे सो आज कर।

वह सोशल मीडिया पर भी बेहद सक्रिय थे, इतने कि कई बार कुछ लोग चिढ़ में कहा करते, बताओ इस उम्र में दिनरात यही करते रहते हैं। वहीं उनके चाहने वालों की भी बड़ी संख्या थी। एक वाकया याद आ रहा है। गोपेश्वर सिंह ने एक पोस्ट लिखी जिसमें फेसबुक पर अतिसक्रिय लेखकों को यह याद दिलाया कि वे या तो समय का अपव्यय कर रहें हैं या कि अपनी रचनात्मक क्षमता के साथ। विनोद स्वरूप उन्होंने चौथीराम जी का नाम ले लिया। इसके बाद तो तूफान आ गया। गोपेश्वर बनाम चौथीराम चल पड़ा। अंततः चौथीराम जी को कहना पड़ा कि गोपेश्वर पुराने यार हैं। इस मामले को बकौल गालिब 'यार से छेड़ चली आती है असद/ न सही इश्क अदावत ही सही' के रूप में ही देखना चाहिए। यहां भी चौथीराम जी ने अपने दोस्ताना संबंधों को तरजीह दी और बताया कि यारों के बीच छेड़ का रिश्ता बना रहना चाहिए।

दरअसल चौथीराम जी ने सोशल मीडिया को एक लोकतांत्रिक जगह के रूप में देखा और उसी रूप में उसका उपयोग करते रहे। उनकी मृत्यु जिस दिन हुई, उस दिन अंतरराष्ट्रीय मदर्स डे था। उनकी आखिरी पोस्ट अंतरराष्ट्रीय मदर्स डे पर थी। अपने आखिरी पोस्ट में चौथीराम जी ने कुछ भावुक-भावुक बातें या कुछ उदात्त विचार लिखने के बजाय एक पेंटिंग डाली। एक बोलती हुई पेंटिंग जिसमें एक युवती पीठ पर ईंट ढोते दिखाई दे रही हैं। ईंट पीठ के ऊपरी हिस्से पर है। उसके ठीक नीचे औरत का बच्चा झूलता सा दिख रहा है। चित्र में तीन और युवतियां दिख रहीं हैं। युवतियों के हाथ में साइकिल है। वे भी साइकिल से कुछ ढो रही हैं। उन सबकी निगाह बच्चे को पीठ पर लादे ईंट ढो रही औरत पर है। चौथीराम जी ने मदर्स डे पर कुछ नहीं लिखा। सिर्फ यह चित्र पोस्ट कर दिया और शीर्षक दिया 'मदर= मदर्स-डे'। बिना कुछ लिखे चौथीराम जी ने बहुत कुछ लिख दिया। चित्र में जो श्रमिक युवती दिख रही है, न उसे मदर्स डे के बारे में कुछ पता है और न ही चित्र की अन्य युवतियों को। पीठ पर टंगा अबोध बच्चा तो बिलकुल अनजान है इस बात से। लेकिन उसकी आंखें खुली हुई हैं। चित्र श्रमजीवी युवतियों की एक ऐसी दुनिया से साक्षात्कार कराता है जिसके लिए मदर्स डे और ऐसे ही अनेक चमकते डेज का कोई अर्थ नहीं। वे बस मां हैं और बच्चे के पालन-पोषण के लिए हाड़तोड़ मेहनत कर रही हैं। यह पोस्ट मां के नाम पर तमाम भावुकता या भावुकता प्रदर्शन की भंगिमाओं से अलग है। बहुत से लोग मिलेंगे जो मां के साथ फोटो मीडिया और सोशल मीडिया में सिर्फ दिखावे के लिए डाल रहे होते हैं। यहां सिर्फ मां है और है उसका श्रमजीवी जीवन।

चौथीराम जी ने जिस तरह वर्चस्व की संस्कृति के खिलाफ अभियान जैसा छेड़ दिया था, लिखकर, बोलकर और प्रत्यक्ष रूप से प्रदर्शनों में शामिल होकर यह पोस्ट भी उनके इसी संकल्प की एक अलग अभिव्यक्ति है। हमलोगों को यह भी शिकायत रहती आई है कि चौथीराम जी ज्यादा बोलते हैं, पर यह पोस्ट उनके बारे में हमारी समझ को दुरुस्त कर रही है कि वे बिना बोले या कि चुप रहकर भी बहुत कुछ कह सकते थे। जानने वाले जानते हैं कि लंबे समय तक चौथीराम जी के लिए चुप्पी जीवन अस्त्र की तरह रही है। वर्चस्व की संस्कृति और वर्चस्व के परिवेश में हाशिये की पृष्ठभूमि से आए हुए आदमी की चुप्पी भी कवच की तरह काम करती है। उनके चुप की अर्थ ध्वनियां मीर के इस शेर की व्यंजना से टकराती हैं- 'हमें इश्क़ में मीर चुप लग गई है/ न शकुरो शिकायत न हरफे हिकायत।'

स्मृति शेष / प्रो चौथीराम यादव
29 जनवरी, 1941 - 12 मई, 2024

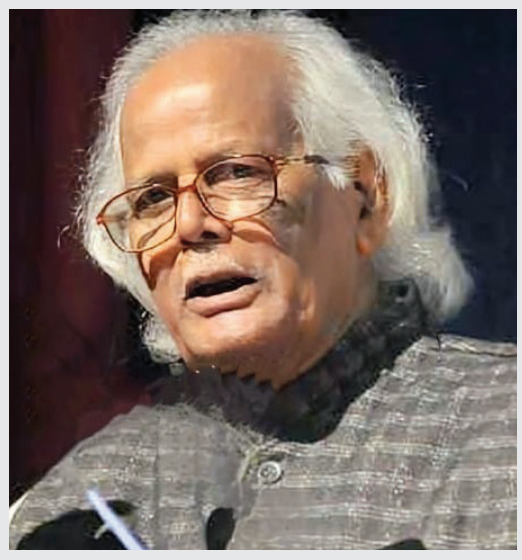

चौथीराम जी ने सोशल मीडिया को एक लोकतांत्रिक जगह के रूप में देखा और उसी रूप में उपयोग करते रहे। मृत्यु के ठीक पूर्व मदर्स डे पर उन्होंने एक पेंटिंग पोस्ट की जिसमें एक युवती की पीठ पर ईंट है और एक बच्चा। उन्होंने सिर्फ यह चित्र लगाया और शीर्षक दिया 'मदर=मदर्स- डे'। बिना कुछ लिखे उन्होंने बहुत कुछ लिख दिया

चौथीराम जी हाशिये के समाज के हक और हकूक के लिए संघर्षरत लेखक आलोचक थे। उन्होंने हर उस फार्म का उपयोग किया जो उनकी संघर्ष यात्रा में सहायक हो सकती थी। सोशल मीडिया का भी। हम अगर केवल मई, 2024 महीने के बारह दिनों के उनके फेसबुक पोस्ट पर नजर डालें तो यह साफ हो जाता है। इन बारह दिनों में उन्होंने भाकपा नेता अतुल कुमार अनजान, बिहार प्रगतिशील लेखक संघ के अध्यक्ष रहे ब्रज कुमार पांडेय और पंजाबी के विद्रोही कवि सुरजीत पातर के निधन पर श्रद्धांजलि, कार्ल मार्क्स, स्वामी अछूतानन्द और रवींद्र नाथ टैगोर की जयंती पर उनकी याद, कुछ अपनी, कुछ हजारी प्रसाद द्विवेदी की किताब से कोटेशन पोस्ट किए हैं। कविता और संगीत की युगलबंदी पर अपने ही किसी व्याख्यान की फोटो भी। कुछ पारिवारिक चित्र भी पोस्ट किए हैं। चित्रों में गांव की एक पुरानी यात्रा की तस्वीर एकाधिक बार है। लगता है कि इन दिनों वह न केवल गांव आ जा रहे थे बल्कि मन ही मन गांव को याद करते रह रहे थे। एक टिप्पणी में उन्होंने कवि रमाशंकर विद्रोही का संक्षिप्त मूल्यांकन भी किया है। वह लिखते हैं- 'रमाशंकर विद्रोही का संघर्ष इस गुलामी के विरुद्ध वंचित समाज की मुक्ति का संघर्ष है जो हजारों साल से वर्चस्ववादी शक्तियों के शोषण का शिकार रहा है। वंचित समाज के विद्रोही उसी व्यवस्था के पीड़ित थे जिसके उत्तराधिकारी आज खुलेआम हक छोड़ने की बात कर रहे हैं। वर्तमान शिक्षण संस्थाएं अपना हक मांगने वाले छात्रों को कुचल देने पर आमादा हैं। विद्रोही अपना हक छोड़ देने से साफ इनकार करते हैं। तुम चाहे हमारी कमर तोड़ दो, चाहे सिर फोड़ दो, पर हम अपना हक नहीं छोड़ेंगे, हरगिज नहीं छोड़ेंगे। हम लड़ेंगे और अपना हक लेकर रहेंगे। जुल्मों सितम के रहते, विद्रोही ने जिद ठान ली है कि हम गुलामी की अंतिम हदों तक लड़ेंगे। विद्रोही जी सत्ता परिवर्तन नहीं, व्यवस्था परिवर्तन के रचनाकार हैं'। ये बातें जितनी रमाशंकर विद्रोही पर लागू होती हैं, उतनी ही स्वयं चौथीराम यादव पर। हजारी प्रसाद द्विवेदी का जो कोटेशन उन्होंने उद्धृत किया है, वह समकालीन सामाजिक परिवेश के लिए कितना मुफ़ीद है- "समूची मानवता जिससे लाभान्वित हो,एक जाति दूसरी जाति से घृणा न करके प्रेम करे, एक समूह दूसरे समूह को दूर रखने की इच्छा न करके पास लाने का प्रयत्न करे, कोई किसी का आश्रित न हो, कोई किसी से वंचित न हो, इस महान् उद्देश्य से ही हमारा साहित्य प्राणोदित होना चाहिए।" चौथीराम जी के विस्तृत लेखन और व्याख्यानों में साहित्य का यही सरोकार प्रकट होता रहा है।

इसी महीने में चौथीराम जी ने एक-एक वाक्य की पोस्ट हंसी के बारे में डाली है। दोनों पोस्ट आठ मई की हैं। पहली में उन्होंने लिखा- 'लगता है, हंसी का कोचिंग सेंटर खोलने का समय आ गया है'। दूसरी पोस्ट है- 'घर परिवार से हंसी का गायब होते जाना, आज की सबसे खौफनाक क्रिया है'। पहली पोस्ट पर उसी समय मेरी निगाह पड़ी थी और मैंने यों ही मौज में लिख दिया था- लेकिन हंसी की कोचिंग किसी बाबा टाइप न खुले। पिछले दिनों मैं स्वयं सामाजिक जीवन से हंसी और आवाज के गायब होने के बारे में सोच रहा था। दूसरी पोस्ट से पता चला कि चौथीराम जी भी पारिवारिक और सामाजिक परिवेश से हंसी के गायब होने को लेकर चिंतित हैं। हंसी का इस तरह गायब होना वास्तव में समाज के भीतरी तहों में मौजूद गहरी अशांति का सूचक है। वह उस गहरी अशांति को भी भाप रहे हैं। यहां गोपेश्वर सिंह वाले जिस वाकये की चर्चा की गई, उससे हंसी के गायब होने को जोड़ें तो बात पूरी होती है। हास्य बोध के गायब होने से शुरू होकर हंसी का गायब होना मानवता के इतिहास में घटित होने वाली बड़ी त्रासदी है। शायद चौथीराम जी इसी ओर संकेत कर रहे थे।

ऐसे समय में जब सामाजिक ही नहीं, निजी जीवन से भी हंसी गायब हो रही है, चौथीराम जी का अचानक जाना केदारनाथ सिंह के शब्दों में कहें तो 'सबसे ख़ौफ़नाक क्रिया है'। ■

Published Date 16 June, 2024 (Sunday), Posted at LPC Delhi RMS, Delhi-06, Posting Days Friday and Saturday

जंगल और जमीन के किस्सों वाली कला

गोंड चित्रकला के लिए समर्पित और प्रख्यात चित्रकार जनगढ़ सिंह श्याम की परंपरा को आगे बढ़ाने वाले सुरेश धुर्वे इसे जीआई टैग मिलने में हुई उपेक्षा से क्षुब्ध हैं

प्रीति डेविड

"यह बरगद का पेड़ है। शाम के समय सभी जानवर यहां आराम करने आते हैं।" और "यह पीपल का पेड़ है। इसकी डालों पर बहुत सी चिड़ियां आकर बैठेंगी।" बातचीत करते हुए सुरेश धुर्वे इसी तरह अपने चित्रों की, उनके रंग-रेखाओं की चर्चा करते हैं। साथ ही पोस्टर-साइज के कागज पर रंगों की बारीक लाइनें भी बनाते जा रहे हैं जो जल्द ही हरे-भरे पेड़ की शाखाओं में परिवर्तित होने वाली हैं।

गोंड चित्रकार सुरेश धुर्वे (49 वर्ष) मध्यप्रदेश के भोपाल शहर में अपने घर की फर्श पर बैठे हमसे बात कर रहे हैं। सबसे ऊपरी मंजिल के इस कमरे की खिड़कियों और दरवाजे से एक पेड़ से छनकर रोशनी आ रही है। उनकी बगल में एक छोटे से जार में हरा पेंट रखा है जिसे वे ब्रश से बार-बार मिलाते रहते हैं कि जम न जाए। वह बताते हैं कि "पहले हम ब्रश के तौर पर बांस की तीलियां और गिलहरी के बाल का इस्तेमाल करते थे लेकिन गिलहरी के बाल पर अब प्रतिबंध लग गया है। यह ठीक भी है। अब हम उनकी जगह प्लास्टिक के ब्रश इस्तेमाल करते हैं।"

सुरेश मानते हैं कि उनकी पेंटिंग्स कहानियां सुनती हैं और "जब मैं कोई चित्र बना रहा होता हूं, तो मुझे यह सोचने में बहुत समय लगता है कि मुझे क्या बनाना है। जैसे, दिवाली आने वाली है तो मुझे उन सभी चीजों के बारे में सोचना है जो इस त्यौहार से जुड़ी हैं। जैसे गाय और दीए।" धुर्वे अपने कामों में पूरे जीवजगत को शामिल करते हैं। जंगल और आकाश, मिथक और लोककथाएं, खेतीबाड़ी और उनके समाज से जुड़ी दूसरी गतिविधियां उनकी कला का सबसे अहम हिस्सा हैं।

सुरेश धुर्वे का जन्म पाटनगढ़ माल में हुआ था। यही वह गांव है जिसे उनकी तरह भोपाल आए दूसरे गोंड चित्रकार अपने पूर्वजों की धरती मानते रहे हैं। यह इलाका नर्मदा नदी के दक्षिण में है और अमरकंटक-अचानकमार टाइगर रिजर्व के जंगलों से घिरा हुआ है। अचानकमार टाइगर रिजर्व में जंगली जानवरों के अलावा विविध प्रकार के पेड़-पौधे, फूल, पक्षी और कीड़े-मकोड़े पाए जाते हैं जो गोंड चित्रकारी का अनिवार्य हिस्सा हैं।

सुरेश धुर्वे याद करते हुए कहते हैं कि "हम जंगल में पाई जाने वाली चीजों से रंग बनाते थे- मसलन, सेमल के वृक्ष के हरे पत्तों से, काले पत्थरों से फूलों से, गीली लाल मिट्टी से और, और भी कई दूसरी चीजों से। हम इन्हें गोंद के साथ मिला कर रंग तैयार करते थे। लेकिन अब हम एक्रिलिक का इस्तेमाल करते हैं। लोग कहते भी हैं कि उन प्राकृतिक रंगों का इस्तेमाल करके हम अपने काम के एवज में ज्यादा कीमत पा सकते हैं लेकिन (चिंता भरे शब्दों में) अब हमें वे रंग भी कहां मिलने वाले?" रोज-ब-रोज कटते पेड़ों और कम होते जाते जंगलों की स्थिति पर वह व्यथित भी हैं और चिंतित भी जिसने उनकी रंग पाने की संभावनाओं पर भी कुठाराघात किया है।

गोंड चित्रकला त्योहारों और शादी-ब्याह के मौकों पर गांव में आदिवासियों के घरों की दीवार पर बनाई जाने वाली सबसे अहम चीज थी। यह 1970 के दशक की बात है जब जाने-माने गोंड चित्रकार जनगढ़ सिंह श्याम राज्य की राजधानी भोपाल आए और सबसे पहले कपड़े और बाद में कैनवास और कागज पर चित्र बनाना शुरू किया बल्कि कागज और कैनवास पर इस कला को नए रूप में प्रस्तुत करने का श्रेय ही उनको जाता है। चित्रकला में अपने अभूतपूर्व योगदान के लिए दिवंगत चित्रकार को 1986 में राज्य का सर्वोच्च नागरिक सम्मान- शिखर सम्मान भी दिया गया।

लेकिन अप्रैल, 2023 में जब गोंड चित्रकला को अंततः ज्योग्राफिकल इंडीकेटर (जीआई) टैग मिला, तब जनगढ़ के कलाकारों के समुदाय की अनदेखी की गई और जीआई टैग भोपाल युवा पर्यावरण शिक्षण एवं सामाजिक संस्थान और तेजस्विनी मेकलसुत महासंघ, गोरखपुर समिति को दे दिया गया। मरहूम चित्रकार के पुत्र मयंक कुमार श्याम कहते हैं, "हम जीआई आवेदकों में जनगढ़ सिंह के नाम का उल्लेख चाहते थे। उनके बिना गोंड चित्रकला की कल्पना भी नहीं की जा सकती है।"

जीआई के लिए खासा प्रयास करने वाले डिंडोरी के जिला कलेक्टर विकास मिश्रा ने अपनी त्वरित प्रतिक्रिया देते हुए फोन पर कहा, "जीआई टैग सभी गोंड चित्रकारों के लिए है। हम इस आधार पर कोई भेदभाव नहीं कर रहे कि आप कहां रहते हैं। भोपाल के कलाकार अपनी चित्रकला को 'गोंड चित्रकला' का नाम दे सकते हैं क्योंकि वे सभी यहां से संबंध रखते हैं। वे सभी एक ही लोग हैं।"

जनवरी, 2024 में जनगढ़ के भोपाल में रहने वाले अनुयायियों- जनगढ़ संवर्द्धन समिति ने चेन्नई के जीआई कार्यालय में एक पत्र भेजकर उनका नाम आवेदकों में शामिल करने की मांग की थी लेकिन इस रिपोर्ट के प्रकाशित होने तक कुछ भी नहीं बदला है।

***

पाटनगढ़ में पले-बढ़े, परिवार में सबसे छोटे और अकेले लड़के सुरेश धुर्वे ने अपने पिता की देखरेख में इस कला की बारीकियां सीखी थीं। उनके पिता एक दक्ष चित्रकार थे और अलग-अलग सामग्री के साथ काम करते थे। धुर्वे बताते हैं कि "वह ठाकुर देव की मूर्तियां बनाने और दरवाजों पर उत्कीर्ण और नक्काशी करके नृत्य करती आकृतियां बनाने में सिद्धहस्त थे। मुझे नहीं पता कि उन्हें यह कला किसने सिखाई लेकिन वे 'राज मिस्त्री' से लेकर 'बढ़ईमिस्त्री' तक बहुत सारे कामों में पारंगत थे।"

सुरेश जब बच्चे थे, पिता के साथ घूमते रहते थे और उनको काम करता देखते हुए ही उनसे बहुत कुछ सीख लिया। वह याद करते हैं कि "मिट्टी का काम होता था। मेरे पिता हमारे गांव के लोगों के लिए लकड़ी का काम भी करते थे। लेकिन यह पेशे से ज्यादा एक शौक था इसलिए इस काम के बदले उन्होंने कभी पैसे नहीं कमाए। ज्यादा से ज्यादा उन्हें खाने के लिए कुछ चीजें मिल जाती थीं। उस जमाने में अनाज ही नकदी भी थी। तकरीबन आधी या एक पसेरी (पांच किलो) के बराबर गेहूं या चावल जैसे अनाज, यही नकदी का गणित था।"

परिवार के पास खेत का सिर्फ छोटा सा टुकड़ा था जिस पर वह मानसून के दिनों में धान, गेहूं और चने की खेती करते थे जो सिर्फ अपने उपभोग के लिए होता था। कच्ची उम्र के सुरेश दूसरों के खेतों में काम करते थेः "एक दिन की मजदूरी के मुझे ढाई रुपये मिलते थे लेकिन यह काम भी मुझे रोज नहीं मिल पाता था।" वर्ष 1986 में महज 10 साल की उम्र में सुरेश अनाथ हो गए। वह याद करते हैं- "मैं पूरी तरह अकेला था।" बड़ी बहनों की शादी हो चुकी थी, इसलिए उनके अपनी परवरिश खुद करने की नौबत आ चुकी थीः "एक दिन जनगढ़ की मां ने मुझे गांव में किसी दीवार पर चित्र बनाते देख लिया और मुझे अपने साथ भोपाल ले जाने का मन बना लिया कि वहां कुछ सीख जाएगा।" और इस तरह उनके पूर्वी मध्य प्रदेश से राजधानी के शहर तक पहुंचने का 600 किलोमीटर का सफर तय हुआ।

जनगढ़ सिंह उन दिनों भोपाल के भारत भवन में काम कर रहे थेः "जनगढ़ जी (मैं उनको 'भैया' बुलाता था) मेरे गुरु थे। उन्होंने ही मुझे काम सिखाया। उससे पहले मैंने कभी कैनवास पर काम नहीं किया था, सिर्फ दीवारों पर काम किया था।"

उनका (जनगढ़ जी) सबसे पहला काम सही रंग का चुनाव करना था। आइल लिए वे पत्थरों और कई दूसरी चीजों को घंटों घिसते रहते थे। यह चार दशक पहले की बात है। उसके बाद सुरेश ने 'सीधी पीड़ी' डिजाईन के जरिये अपनी खुद की पहचान बनाई- "यह आप मेरे कामों में देख सकते हैं।" ■

जिजीविषा सुरेश धुर्वे सिर्फ पेंटिंग नहीं बनाते। वह अपने चित्रों के जरिये कहानियां कहते हैं, बल्कि उन्हें जीते हैं। कहानियां जिनमें जंगल है, आकाश है और है हमारा भरापूरा लोक जीवन।

रोज-ब-रोज कटते पेड़ों और कम होते जाते जंगलों से व्यथित धुर्वे कहते है कि इसने हमारी रंग पाने की संभावनाओं पर भी कुठाराघात किया है। वह कहते हैं कि "हम जंगल की चीजों से रंग बनाते थे- मसलन, सेमल के हरे पत्तों से, काले पत्थरों के फूलों से, गीली लाल मिट्टी और भी कई अन्य चीजों से। लेकिन अब हमें वे रंग भी कहां मिलने वाले?"

दंश भोपाल के कलाकार (बाएं) ननकुशिया श्याम, सुरेश धुर्वे, सुभाष व्यम, हीरामन उर्वेती, मयंक श्याम आदि गोंड चित्रकला के लिए जीआई टैग (ऊपर) मिलने से खुश हैं लेकिन भोपाल वालों की उपेक्षा से दुखी भी हैं। (दाएं) इनकी चित्रकारी में पेड़-पौधों, फूलों, पक्षियों और कीड़े-मकोड़ों के साथ वहां का जीवन भी दिखता है। फोटो- प्रीति डेविड

अनुवाद: प्रभात मिलिंद ;
साभार: ruralindiaonline.org

नवजीवन
www.navjivanindia.com
NATIONAL HERALD
www.nationalheraldindia.com
قومی آواز
www.qaumiawaz.com

लोकतांत्रिक और धर्मनिरपेक्ष समाज के लिए
स्वतंत्र, निष्पक्ष और भयमुक्त पत्रकारिता

संडे नवजीवन
145 Issues
Total Price: ₹2,000

NATIONAL HERALD ON SUNDAY
105 Issues
Total Price: ₹2,000

COVER PRICE ₹15
COVER PRICE ₹20

105 Issues of National Herald on Sunday & 145 Issues of संडे नवजीवन
Total Price: ₹4,000

SUBSCRIBE
www.nationalheraldindia.com/subscribe

For your copy of your favourite Newspaper The National Herald on Sunday ask your newspaper vendor or login to **www.nationalheraldindia.com/subscribe** to subscribe or mail to circulation **circulation.ajl@nationalheraldindia.com** or write to subscription cell **The Associated Journals Limited, Herald House, 5-A, Bahadur Shah Zafar Marg, New Delhi -110002** or call **011-47636321/24**